खण्ड 3

क्षेत्रीय अपेक्षाएं एवं आन्दोलन

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खण्ड 3 परिचय

भारत में कई क्षेत्र ऐसे हैं जिनका विकास असमान स्तर पर हुआ है। कुछ क्षेत्र ज्यादा विकसित हैं तो कुछ क्षेत्र कम या पिछड़े है। विभिन्न क्षेत्रों की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति भी अलग-अलग है। ये विविधताऐं आमतौर पर सभी क्षेत्रों में देखी जा सकती है चाहे वह राज्य हो या केन्द्र शासित प्रदेश। कई क्षेत्रों में लोगों की समस्याऐं भी एक जैसी ही लगती है। उनका मानना है कि उनके क्षेत्र के साथ सरकारों ने भेदभाव किया है, चाहे वह राज्य सरकार हो या केन्द्र सरकार। उनका तर्क है कि, उनकी इच्छाऐं तभी पूरी हो सकती है जब उनके क्षेत्र का पुनर्गठन किया जाये। भारत में कई क्षेत्रों से पुनर्गठन की माँग उठने लगी हैं। ये माँगें कई तरह की हैं जैसे - स्वायत्ता का आंदोलन, पृथक राज्य के लिए आंदोलन, इत्यादि। इस खण्ड में तीन इकाइयाँ है जो कि क्षेत्रीय अपेक्षाओं से संबंधित है। इकाई 6 में स्वायत्ता आंदोलन की चर्चा की गई है, इकाई 7 में विद्रोह की तथा इकाई 8 में पृथक राज्य के आंदोलनों की चर्चा की गई है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 6 स्वायत्ता आन्दोलन*

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 संविधानिक प्रावधान और क्षेत्रीय स्वायत्ता

6.3 स्वायत्ता आंदोलन की विशेषताऐं

6.4 स्वायत्ता आंदोलन के उदाहरण

6.4.1 ''राज्य के अंदर राज्य'' और स्वायत्ताः मेघालय

6.4.2 पृथक राज्य से स्वायत्ताः बोडो आंदोलन

6.4.3 बोडो आंदोलन का संदर्भः उल्फा

6.4.4 'कार्बी और डिमासा काचारी स्वायत्ता आंदोलन

6.5 सारांश

6.6 संदर्भ

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सकेंगे :

- संघीय ढ़ाँचे में स्वायत्ता के अर्थ को समझना;
- संघीय ढ़ाँचे में भारतीय संविधान में स्वायत्ता के प्रावधानों की व्याख्या करना; तथा
- भारत में स्वायत्ता आंदोलन के उदाहरणों की चर्चा करना।

6.1 परिचय

स्वायत्ता आंदोलन किसी क्षेत्र के लोगों का सामूहिक प्रक्रिर्या है जो कि संघीय इकाइयों केन्द्र, राज्य एवं स्थानीय शासन के पुनर्गठन की बात करता है। ताकि लोग स्वयं को अपने कार्यो में व्यवस्त रख सकें और स्वायत्ता का लाभ उठा सकें।

स्वायत्ता कई प्रकार की होती है, सांस्कृतिक, जातीय, आर्थिक, राजनीतिक इत्यादि। जो क्षेत्र स्वायत्ता की माँग उठा रहे हैं उनमें इन मुद्दों पर कानून बनाने की जरूरत होती है। संघीय ढ़ाँचे में स्वायत्ता की अवधारणा के कई अर्थ हैंः किसी राज्य से अलग राज्य बनाना, या संघीय संबंधों को पुनः व्यवस्थित करना इत्यादि। स्वायत्ता को प्रायः आत्म-निर्णय के रूप में देखा जाता है। हालांकि स्वनिणर्य और स्वायत्ता कभी-कभी एक दूसरे के प्रयास के रूप में इस्तेमाल की जाती है, भारतीय परिप्रेक्ष्य में उनके अलग-अलग माने है। आत्म-निर्णय अक्सर मौजूदा संप्रभु राज्य से बाहर एक संप्रभु की स्थापना को संदर्भित करता है। इसे अलगाव के रूप में भी जाना जाता है, जिसमें एक देश का एक क्षेत्र अलग-अलग और प्रभुसत्ता संपन्न राज्य बनाना चाहता है। भारत का संविधान किसी भी क्षेत्र को प्रभुसत्ता संपन्न राज्य की स्थापना को मान्यता नहीं देता हैं। किसी राज्य के क्षेत्र में क्षेत्र और राज्य के बीच संघीय संबंधों की पुनर्व्यवस्था के लिये जो आंदोलन चलाया जो रहा हो, उसे

*प्रो. जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली

स्वायत्ता आंदोलन कहा जाता है। क्षेत्रीय, जिला या क्षेत्रीय परिषदों जैसे प्रशासनिक साधनों के सृजन और प्रशासनिक उपायों द्वारों ऐसी स्वायत्ता की माँग की जाती है। एक या अधिक राज्यों के अलग राज्य बनाने के लिए आंदोलन को पृथक राज्य आंदोलन कहा जाता है। यह आप इकाई 8 में पढेंगे। भारत के गणतंत्र से बाहर प्रभुसत्ता संपन्न राज्य स्थापित करने का प्रयास करने वाले आंदोलन को विद्रोह कहा जाता है। आप इसके बारे में इकाई 7 में पढ़ेंगे। इस इकाई में आप स्वायत्ता आंदोलन के बारे में पढ़ेंगे।

6.2 संविधानिक प्रावधान और स्वायत्ता

भारत एक संघीय राज्य व्यवस्था है जिसमें 28 राज्यों और 11 केन्द्र शासित प्रदेश है। जम्मू और कश्मीर को दो केन्द्र शासित प्रदेशों में बाँटा गया है। इनमें से प्रत्येक राज्य में ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ विभिन्न सामाजिक, भाषाई और सांस्कृतिक समूह हैं तथा विकास के असमान स्तर है। जैसा कि भारत संघीय प्रणाली का अनुसरण करता है, भारत में राज्यों के बीच संबंधों से संबंधित कानूनों के अधिनियम का विनियमन संविधान के प्रावधानों के अनुसार किया जाता है। राज्यों और संघ राज्यों के अधिकार क्षेत्र में आने वाले विषयों की तीन सूचियाँ है जिन्हें संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची के रूप में जाना गया है। ये प्रावधान लोगों की शिकायतों के समाधान के लिये हैं; यदि वे राज्यों के वर्तमान सीमाओं के भीतर शक्ति संबंधों की व्यवस्था से संतुष्ट न हों। छठी अनुसूची (अनु. 244) में पूर्वोत्तर भारत के चार राज्यों में स्वायत्त निकायों-स्वायत्त शिक्षा, क्षेत्रीय या क्षेत्रीय परिषदों के निर्माण के प्रावधान है। ये राज्य हैं असम, मेघालय, त्रिपुरा, और मिजोरम। अनु. 371 जो कि अनु. 371 (ए) से लेकर (जे) तक है, ये उत्तर पूर्व के राज्यों - नागालैंड, असम, मणिपुर, सिक्किम, मिज़ोरम और अरूणाचल प्रदेश के लिए है तथा अन्य क्षेत्रों में महाराष्ट्र, गुजरात, आंध्रप्रदेश, गोआ और कर्नाटक के लिए विशेष प्रावधान हैं। इस अनुच्छेद का उद्देश्य पिछड़ें क्षेत्रों की संस्कृति और पारंपरिक कानूनों की सुरक्षा के लिये विशेष सहायता प्रदान करना है। अरूणाचल प्रदेश, नागालैंड, मिजोरम और त्रिपुरा राज्यों में लोगों की संस्कृति और अर्थव्यवस्था की रक्षा के लिये उपकरण के तौर पर इनर लाईन परमिट (आई.एल.पी.) मौजूद है। इस उपाय के अंतर्गत, भारत का निवासी, जो इन राज्यों का निवासी नहीं है, केन्द्र सरकार की अनुमति मिलने के बाद ही उसमें प्रवेश कर सकता है। इसे आई.एल.पी. कहते हैं। मेघालय, और मणिपुर जैसे राज्यों में भी आई.एल.पी. लागू करने की माँग उठ रही हैं। राज्यों की सीमाओं में परिवर्तन, नये राज्यों के निर्माण और राज्यों के भीतर क्षेत्रों को स्वायत्ता देने के लिए भी संविधान में प्रावधान किये गये हैं। जैसा कि आप इकाई 8 में पढ़ेंगे, संविधान के अनुच्छेद 3 के अनुसार भारतीय संघ में नये राज्य बनाये जा सकते हैं। 73वें और 74 वें संविधान संशोधन में ऐसे विषय हैं जो क्रमशः ग्रामीण और शहरी स्थानीय प्रशासन के अधिकार क्षेत्र में आते हैं।

6.3 स्वायत्त आंदोलन की विशेषताएँ

हालांकि स्वायत्ता आंदोलनों का उद्देश्य अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर आए बिना राज्य के पुनर्गठन वाले क्षेत्रों के बीच शक्ति संबंधों को स्थापित करना है, फिर भी सभी स्वायत्ता आंदोलनों की यह पहली माँग नहीं थी। कुछ स्वायत्ता के आंदोलनों ने एक या अधिक राज्यों में से पृथक राज्य स्थापित करने के उद्देश्य से शुरू किया, किंतु आंदोलन के दौरान मौजूदा राज्य में स्वायत्ता प्राप्त करने की उनकी माँग को छोड़ दिया गया। मेघालय के मामले में आंदोलन ने असम को पृथक राज्य बनाने के अपने उद्देश्य से शुरू किया, लेकिन अलग राज्य के समर्थकों ने सन् 1971-1972 में राज्य के भीतर एक राज्य का दर्जा स्वीकार कर लिया। पृथक राज्य के आंदोलन और विद्रोह की माँग की तरह, स्वायत्ता आंदोलनों को

निम्नलिखित विशेषताऐं हैं :

1) ये उन क्षेत्रों में उठाये जाते हैं जहाँ पर लोगों के साथ भेदभाव होता है। ये भेदभाव आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक तौर पर संसाधनयुक्त क्षेत्रों द्वारा किया जाता है।

2) इन माँगों को समाज के मुखर तबकों द्वारा उठाया जाता है जैसे मध्यम वर्ग, छात्र, नागरिक समाज के संगठन एवं राजनैतिक दल।

3) स्वायत्ता की माँग करने वालों का आरोप है कि उनका क्षेत्र ''आंतरिक उपनिवेश'' बन गया है, विशेषकर विकसित क्षेत्रों का 'उपनिवेश'। उनके प्राकृतिक संसाधनों का शोषण बाहरी लोगों द्वारा दिया जाता है तथा वे उन्हें अपने संसाधनों के प्रयोग बदले कोई भरना रोयल्टी भी नहीं मिलती।

4) उनके क्षेत्र को राज्य के राजनीतिक संस्थानों में उचित प्रतिनिधित्व नहीं दिया जाता है तथा उनकी सहमति के बिना निर्माण लिये जाते हैं।

5) उनकी भाषा एवं संस्कृति को उचित पहचान नहीं दी जाती हैं तथा कई मामलों में उनके ऊपर भाषा थोपी जाती है।

6) स्वायत्ता आंदोलनों का कुछ राजनैतिक संदर्भ भी होता है।

भारत में स्वायत्ता आंदोलन के ये कुछ समान कारक हैं, लेकिन उनका प्रभाव एवं आकार से अलग-अलग क्षेत्रों में अलग होता है।

अभ्यास प्रश्न 1

नोटः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) स्वायत्ता आंदोलनों से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) स्वायत्ता आंदोलनों की क्या-क्या विशेषताऐं है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

6.4 स्वायत्ता आंदोलनों के उदाहरण

आप इस इकाई में स्वायत्ता संबंधी आंदोलनों के बारे में कुछ उदाहरणों के बारे में नीचे पढ़ेंगे। पृथक राज्य की माँग के बाद मेघालय को स्वायत्त राज्य में तबदील कर दिया गया था। असम में बोडोलैण्ड की माँग को नकार दिया गया तथा इसके स्थान आसाम राज्य के अंदर ही बोडो लोगों को स्वायत्ता दी गई और कार्बी तथा डिमासा काचरी लोग जो पहले पृथक राज्य की माँग कर रहे थे, ने स्वायत्ता मांगा।

6.4.1 ''राज्य के अंदर राज्य'' और स्वायत्ताः मेघालय

मेघालय का प्रकरण एक ऐसा उदाहरण है, जहाँ असम के बाहर एक पहाड़ी राज्य के निर्माण की माँग की गयी, लेकिन एक अलग राज्य के बजाय एक स्वायत्त राज्य का निर्माण असम के अंदर किया गया। यह ''राज्य के अंदर एक राज्य'' के तहत् किया गया था। जो सन् 1970-72 के दौरान अस्तित्व में था। हालांकि 1960 के दशक में असम के ही भाग में मेघालय के आदिवासियों ने ''खासी और गारो हिल्स के आदिवासियों ने अलग राज्य की माँग की, यह माँग 1950 के दशक में उठी थी। ये असाम के उन क्षेत्रों में से थे जिनका प्रशासन छठी अनुसूची के अनुसार चलता था। छठी अनुसूची क्षेत्र के लोग उसके प्रावधानों से संतुष्ट नहीं थे। उनका तर्क था कि इससे उनके हितों की समुचित सुरक्षा नहीं हुई थी और असम के मैदानी इलाकों के लोगों के साथ उनका उचित व्यवहार नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त, असम जातीय महासभा के प्रस्ताव से असमी भाषा को असम के लिए सरकारी भाषा बनाया गया उस समय के आसाम में वे पहाड़ी क्षेत्र भी आते थे जहाँ गैर आसामी बोलने वाले लोग रहते थे। असम जातीय महासभा के प्रस्ताव से गैर असमी बोलने वाले लोग नाराज हो गये। इस संदर्भ में, गारो हिल्स परिषद के मुख्य कार्यकारी अध्यक्ष विल्यम संगमा ने 16-17 जनवरी 1950 को सभी जिला परिषदों अध्यक्षों की बैठक बुलाई। इस बैठक में लुसाई, उत्तरी कचार गारो एवं संयुक्त जनजाति खासी परिषदों के अध्यक्षों (CEMS) ने भाग लिया परन्तु इसमें मिखिर हिल्स जिला परिषद के सदस्यों ने भाग नहीं लिया। इस बैठक में दो बिंदुओं पर चर्चा हुई : एक अलग पहाड़ी राज्य का गठन और छठी अनुसूची में संशोधन क्योंकि यह पहाड़ी क्षेत्रों को कोई वास्तविक स्वायत्ता प्रदान नहीं करता है। संगमा ने जोर दिया कि पहाड़ी राज्य के अलावा कोई विकल्प नहीं है। लेकिन मिर्जा जिला परिषद अध्यक्ष (CEM) का तर्क था नये राज्य की माँग जभी रखी जा सकती है जब स्वायत्ता की माँग को अस्वीकार किया गया हो। इस बैठक के छठी अनुसूची के संशोधन के लिए सुझाव को कई संसद सदस्यों को भेजे गये। इस बैठक के बाद, 1954, 6-8 अक्टूबर को असम पहाड़ी आदिवासी नेताओं का सम्मेलन बुलाया गया। इस बैठक में 46 प्रतिनिधियों (मिजो हिल्स को छोड़कर) ने भाग लिया। सम्मेलन में सर्वसम्पति से असम के ''स्वायत्त जिलों का एक अलग राज्य'' घोषित किया जाए और सम्मेलन ने राज्य पुनर्गठन के लिए राष्ट्रीय पुर्नगठन आयोग को ज्ञापन भेजा। आयोग ने इस माँग को इस आधार पर खारिज कर दिया कि, पृथक राज्य का आंदोलन जंतिया, खासी, गारो हिल्स तक सीमित था, इसमे असम के अन्य क्षेत्र शामिल नहीं थे। पटसकर आयोग ने अलग राज्य के लिए प्रस्ताव को खारिज कर दिया। एक अलग राज्य की बजाय, एक स्वायत्त राज्य, जिसका नाम मेघालय के नाम से जाना गया, 1 अप्रैल, 1970 का असम राज्य के भीतर निर्माण किया गया। इसे 22वें संशोधन के अनुसार असम (मेघालय) पुनर्गठन विधेयक, 1969 पारित होने के पश्चात बनाया गया। स्वायत्त राज्य में शक्ति वितरण की तीन स्तरीय प्रणाली थी। कार्यपालिका शक्ति को असम के राज्यपाल को सौंप दिया गया, जिसे असम में स्वायत्त मेघालय राज्य के मंत्रियों की परिषद के द्वारा सहायता और परामर्ष देने का प्रावधान था। विधायी लोकसभी की सदस्यता से मेघालय में सभी भारतीयों को सदस्यता से संबंधित

विधान सभा का गठन किया। सिवाय शीलोंग के जहाँ सभी सीटें अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित की गई तथा राज्यपाल को विधान सभा में तीन अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों को नामांकित करने का अधिकार दिया गया। ये ऐसे अल्पसंख्यक समुदाय थे जिन्हें राज्यपाल की राय में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया था। असम के राज्यपाल को जनजातीय गाँव में अपील की अदालन बनाने का अधिकार दिया गया। असम से मेघालय की विधानसभाओं को कृषि, वन, यातायात, संचार आदि पर कानून बनाने का अधिकार दिया गया। असम और मेघालय के बीच शक्तियों के वितरण में चुनौतियों का सामना करना पड़ा। 1972 में मेघालय एक अलग राज्य बन गया।

6.4.2 अलग राज्य से स्वायत्ताः बोडो आंदोलन

असम के बोडो आदिवासी कई वर्षों से स्वायत्ता की माँग कर रहे हैं। बोडो स्वायत्ता आंदोलन दो चरणों से होकर गुजरा हैः पहला, 1960 के दशक के अंत से 1979 तक तथा दूसरा, 1979 से 1985 तक अर्थात् आसू आंदोलन के पश्चात्। बोडो आंदोलन की दो प्रमुख माँगें रही हैं। एक असम राज्य से अलग राज्य बनाना तथा दूसरा, राज्य के भीतर की स्वायत्ता प्राप्त करना। प्रारंभिक वर्षों में बोडो आंदोलन की प्रमुख माँग अलग बोडोलैंड राज्य के गठन की माँग थी। 1967 में शुरू हुए इस आंदोलन का पृथक चरण नये उद्यांचल राज्य की माँग के लिए था। 1963 में नागालैण्ड की स्थापना के पश्चात् बोडोलैण्ड की भी माँग उठने लगी थी जैसा कि असम से अलग मेघालय, मिजोरम, अरूणाचल प्रदेश इत्यादि। जबकि असम के पहाड़ी इलाकों को मिलाकर 1972 में असम राज्य मेघालय का गठन किया गया था तथा अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम को केन्द्र शासित प्रदेश बनाये गये। तथा 1963 में नागालैण्ड पहले से अलग राज्य बन गया था, इसलिये बोरोलैण्ड की माँग ने जोर नहीं पकड़ा।

बोडो स्वायत्ता आंदोलन का अगला चरण 1987 में शुरू हुआ था, 1985 में असम समझौतें पर हस्ताक्षर होने के पश्चात यह आंदोलन इस चरण में और ज्यादा तेज हुआ। अन्य बहुत से स्थानीय समूहों की तरह बोडो समुदाय ने भी आसू के नेतृत्व में विदेशियों के खिलाफ चलाये गये आंदोलनों में हिस्सा लिया था। लेकिन असम समझौते पर हस्ताक्षर करने के बाद उनको यह महसूस हुआ कि उसकी सांस्कृतिक स्वायत्ता और राजनीतिक अधिकारों को असम के प्रभुत्व समूह महत्ता नहीं देते हैं। बोडो के अंदर यह भावना विकसित हुई कि, असम समझौते के बाद भी उनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया गया, हालांकि उन्होंने असम आंदोलन (1979-85) में भाग लिया था। उनका मानना था कि असम समझौते का क्लोज 6 (धारा 6) उनके सांस्कृतिक एवं आर्थिक हितों के खिलाफ था। बोडो समुदाय की नजर में, यह धारा उनकी पहचान को नष्ट कर देगी एवं इसके परिणामस्वरूप उनकी पहचान उच्च जाति की पहचान में मिल जायेगी। संजीब बरूआ की पुस्तक ''इंडिया अगेंस्ट इटसेल्फ'' के एक अध्याय में है बोडो समुदाय ने कहा है ''कि हम बोडो हैं, न कि असमी''। इससे उनकी पहचान को साबित करने का प्रयास किया गया था। अपनी पहचान को बरकरार रखने के लिये अखिल भारत बोडो स्टूडेंट यूनियन ने 92-सूत्री चार्टर तैयार किया गया जिसे बोडोलैण्ड के प्रचार में प्रयोग किया गया था। संजीब बरूआ ने इन माँगों को तीन श्रेणीयों में वर्गीकृत किया हैः सांस्कृतिक एवं भाषाई, आर्थिक अवसर और विकास, तथा आंतरिक माँगें। बोडो समुदाय की विशेष संस्कृति उनकी पौशाक, भाषा, खान-पान, इत्यादि है, जो कि असमी संस्कृति से अलग है।

1993 से बोडो आंदोलन का फोकस कोकराझार, बाकसा, चिरांग और उडाल्गढ़ जिलों में ज्यादा था। इसका मकसद भी बोडो स्वायत्ता की माँग ही था। सरकार और बोडो के बीच 1993, 2003 एवं 2020 में समझौते पर हस्ताक्षर किये गये थे जिसमें बोडो होमलेंड के विषय

के फॉकस में कमी आई। लेकिन बोडो का एक गुट अभी भी बोडोलैण्ड राज्य की माँग कर रहा था। 1993 के बोडो समझौते के तहत् बोडोलैण्ड स्वायत्ता परिषद (बीएसी) का गठन किया गया था। तथापि इसमें परिषद (बीएसी) के क्षेत्राकिकार की परिभाषा नहीं दी गई थी। इस कारण यहाँ कोई चुनाव भी नहीं हो सका। 1996 तक, बोडो ने फिर से बोडोलैण्ड की माँग की। परन्तु दो मिलिटेंट गुटों ने बोडो परिषद को मानने से इन्कार कर दिया, इनमें बोडोलैण्ड आर्मी और बोडोलैण्ड लिबरेशन फोर्स (बी.एल.टी.एफ.) शामिल थे। उन्होंने इस परिषद को ''दिसपुर की कठपुतली बताया था। 2003 में बोडो समझोते के बाद बोडोलैण्ड टेरिटोरियल काँउसिल का गठन किया गया। इस परिषद का अधिकार क्षेत्र 3082 गाँव तक बढ़ा दिया गया तथा इसे 40 विषयों में कानून बनाने का अधिकार दिया गया। इसमें एक प्रमुख और उप-प्रमुख सहित अधिकतम 12 कार्यकारी सदस्यों की कार्यकारी परिषद की व्यवस्था की गई। इसमें गैर-आदिवासी लोगों को प्रतिनिधित्व देने की व्यवस्था की। तीसरे बोडो समझौते पर जनवरी, 2020 में केन्द्रीय गृहमंत्रालय, राज्य सरकार और बोडो समूहों के बीच हस्ताक्षर किये गये। इसकी कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएं इस प्रकार हैं। केन्द्रिय और राज्य सरकारों के अलावा इस समझौते पर हस्ताक्षर करने वालों में आंतकवादी समूह के लोग भी शामिल थे जिन्होंने पहले हस्ताक्षर नहीं किये थे। बोडो टेरेटोरियल एरिया डिस्ट्रिक्ट (बीटीएडी) के स्थान पर बोडो टेरीटोरियल रीज़न (बी.टी.आर.) बनाय गया। सेवानिवृत जज की अध्यक्षता में एक आयोग का गठन किया गया, जिसमें आदिवासी लोगों को शामिल करने का कोई तरीका सुझाया जायेगा। इसी तरह, जिन गाँवों में गैर-अधिकारी लोग रह रहे हैं, उन्हें बी.टी.आर. के क्षेत्र से बाहर रखा जायेगा। बी.टी.आर. के पास विधायी, कार्यपालिका, आर्थिक एवं प्रशासनिक अधिकार होंगे। इस समझौते के तहत् असम के अंदर ही स्वायत्ता का प्रावधान किया गया तथा पृथक राज्य के मुद्दे को दूर रखा गया। 250 करोड़ रूपये की राशि प्रतिवर्ष क्षेत्र के विकास के लिये रखी गयी तथा इतनी ही राशि केन्द्र सरकार द्वारा दी जायेगी। बी.टी.आर. में सीटों की संख्या भी 40 से बढ़ाकर 60 की जायेगी।

6.4.3 बोडो आंदोलन का संदर्भः उल्फा

बोडो समुदाय का असम समझौते की धारा छः पर संदेह के अलावा दूसरे 1985 से बोडोलैण्ड आंदोलन का अन्य कारण थाः उच्च जाति प्रभुत्व वाले उल्फा द्वारा असम की प्रभुसत्ता संपन्न राज्य के लिये माँग की, जिसमें असम राज्य के ऐसे समतल क्षेत्र शामिल किए थे जिनमें बोडो लोग रहते हैं। उल्फा एक संप्रभु राज्य, स्थापित करना चाहता था क्योंकि यह अहोम राज्य के रूप में पहले विद्यमान था और अहोम राज्य को ब्रिटिश भारत में मिलाने के कारण भारत इसकी सम्प्रुता के साथ समझौता किया गया था। उल्फा के आसू के साथ मतभेद थे। इसका कारण यह है उल्फा के अनुसार कि असम के सभी लोग जो असम की संस्कृति और भूमि पर विश्वास करते हैं और उनका आदर करते हैं, वे सभी असम के लोग है, भले ही उनके मूल स्थान और जातीयता अलग हो। लेकिन आसू के लिये 31 दिसम्बर, 1971 के बाद आये। बांग्लादेशी विदेशी थे जिन्हें असम से निश्कासित करने की जरूरत थी। 1983 में हुए विधानसभा चुनाव में काँग्रेस की जीत तथा हितेश्वर सेखिया की सरकार बनने के बाद असम में उल्फा की स्थिति मजबूत बनी। इसकी गतिविधियां असम गण परिषद (ए.जी.पी.) के पहले शासन (1986-90) में तेज हो गयी थीं, उल्फा ने हिंसा, जबरन वसूली, अपहरण आदि में हिस्सा लिया। उन्होंने समांनांतर सरकार बनाई थी और कारोबारियों से कर वसूली भी की। उल्फा ने शिकायत की कि असम भारत का उपनिवेश बन गया था। अन्य क्षेत्रों के विकास के लिये इसके प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग किया जाता था। असम के राज्य शासकों को प्राकृतिक संसाधनों के निष्कर्षण के लिये राज्य सरकार द्वारा तेल और प्राकृतिक संसाधनों के लिए पर्याप्त भुगतान नहीं किया जाता था। राज्य में औद्योगिक निवेश में भेदभाव किया गया था। 1993 में हितेश्वर सैखिया सरकार ने

आत्म समर्पण करने वाले उल्फा के सदस्यों को माफी दी थी। ये उल्फा या सुल्फा के नाम से जाना गया। राज्य और केन्द्र सरकारों ने उल्फा सदस्यों पर जबरदस्ती बल प्रयोग किया, क्योंकि वे जबरन वसूली करने में लगे थे। सरकार ने उन्हें 'ऑपरेशन बजरंग'' और ऑपरेशन राइनो नामक नीतियों द्वारा निशाना बनाया।

6.4.4 कार्बी और डिमासा काचारी स्वायत्ता आंदोलन

असम के उत्तर कचार पहाड़ी जिलों की दो जनजातियाँ कार्बी और डिमासा काचरिया भी स्वायत्ता की माँग कर रही हैं। प्रारंभ में इन दोनों जनजातियों ने असम आंदोलन (1979-1985) में भाग नहीं लिया था। ना ही उन्होंने पहाड़ी राज्यों की माँग का समर्थन किया जो बाद में असम से अलग मेघालय राज्य बना था। मेघालय के अलग राज्य बनने के पूर्व 1970-1972 के बीच यह स्वायत्त राज्य था। 1960 के दशक से ही ये दोनों जनजातियां स्वायत्त परिषद की सीमाओं की शिकायत कर रही थीं जो कि छठी अनुसूची की अंतर्गत बनाई गई थी। वास्तम में कर्बी ऐंगलोंग जिले में स्वायत्त परिषद एक सबसे पुरानी परिषद है जो कि 1951 से ही विद्यमान है। दो सबसे पुरानी स्वायत्त परिषद नागालैण्ड और मिज़ोरम थीं जो 1963 और 1987 में अलग राज्य बने। कार्बी और डिमासा काचारी समुदायों ने अपनी माँग ए.जी.पी. के गठन के बाद उठाई। इसी के साथ बोडो आंदोलन भी तेज हो गया था। कार्बी और डिमासा कचारी स्वायत्ता की माँग का समर्थन ए.एस.डी.सी (स्वायत्त राज्य माँग) जैसे संगठन ने किया था। उनके आंदोलन का प्रमुख कारण 1985 में हुए असम समझौते के बाद हुआ। मोनीरूल हसन के अनुसार, काँग्रेस के पतन के बाद ही 1987 में ए.जी.पी. को विधानसभा चुनावों में जीत हासिल हुई थी, इसने इन दोनों जनजातियों को अलग-थलग कर दिया। पहले इनका प्रतिनिधित्व कांग्रेस तथा वामपंथी दलों में था। कार्बी समुदाय की माँग थी कि राज्य के भीतर ही प्रशासनिक इकाई को स्वायत्त परिषद में बदल देना चाहिए। कर्बी को कर्बी जनजाति को ऐंलोंग स्वायत्त परिषद में स्वायत्ता प्रदान की गई जिसमें 26 सीटें हैं।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) मेघालय को 'राज्य के अंदर राज्य' (1971-72) में क्यों जाना जाता हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) 2020 के बोडो समझौते के मुख्य पहलू कौन से थे?

.....

.....

.....

3) कार्बी-डिमासा काचरी स्वायत्त आंदोलन की विशेषताओं की चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

6.5 सारांश

स्वायत्ता आंदोलन किसी क्षेत्र में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक या राजनीतिक मामलों में अपने स्वायत्ता प्राप्त करने के लिए सामूहिक आंदोलन होते हैं। ऐसी स्वायत्ता का प्रयास ऐसे राज्य और क्षेत्रों के बीच संघीय इकाइयों के बीच संबंधों के पुनर्विन्यास के लिए किया जाता है, जो स्वायत्ता चाहते हैं। जो क्षेत्र स्वायत्ता चाहते हैं उनकी स्वायत्ता की माँग हमेशा प्राथमिक माँग नहीं होती है। कई मामलों में उनकी प्राथमिकता अलग राज्य बनाने की माँग होती है लेकिन आंदोलन के बढ़ते क्रम में नये निर्माण की माँग समाप्त हो जाती है और ऐसे आन्दोलनों को प्राथमिकता एक स्वायत्ता प्राप्त करने में बदल जाती है। भारत में स्वायत्ता के आंदोलनों के प्रमुख उदाहरणों में बोडोलैण्ड, आंदोलन और कार्बी, डिमासा काचारी आंदोलन शामिल हैं। असम राज्य के अंतर्गत मेघालय का एक स्वायत्त राज्य के रूप में मेघालय का (1971-72) 'राज्य के अंदर राज्य' बनना एक अभूतपूर्व उदाहरण था। यद्यपि, खासी, जेतिंया और गारो पहाड़ी इलाकों के लोगों ने अलग राज्य की माँग की थी लेकिन केन्द्र सरकार ने अलग राज्य के बजाय (1971-72 में) स्वायत्त राज्य प्रदान किया और 1972 में स्वायत्त राज्य को अलग राज्य मेघालय में तब्दील कर दिया गया था। स्वायत्ता आंदोलन की शुरुआत सामान्यतः मुखर लोगों के द्वारा की जाती है। इसका प्रमुख कारण था उनके क्षेत्र में लोग उस समय की सरकार के खिलाफ थे। स्वायत्ता आंदोलन के पीछे मुख्य कारण किसी क्षेत्र के लोगों का यह मानना होता है कि उनके खिलाफ सामाजिक आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक आधार पर दूसरे क्षेत्रों या सरकार द्वारा भेदभाव किया जाता है। उनका मानना होता है कि स्वायत्ता मिलने के बाद उनके साथ हो रहे भेदभाव को दूर किया जा सकता है और उनका विकास किया जा सकता है।

6.6 संदर्भ

बरूआ, संजीब (1999) *इंडिया अगेंस्ट इटसैल्फः असम एण्ड द् पोलिटिक्स ऑफ नेशनलिटी,* दिल्ली, ओ. यू. पी.।

बठारी, उत्तम (2015), ''द केस ऑफ कर्ब-डिमासा आटोनोमी मूवमेंट'', इन संध्या गोस्वामी (एड) *ट्रबल्ड डावरसिटीः पोलिटिकल प्रोसेस इन नोर्थईस्ट इंडिया,* ओ. यू. पी., न्यू दिल्ली।

भट्टाचार्य, दिपांकर (1993), ''कार्बी ऐंगलोंग रीविजिटेड'' *ई.पी.डब्ल्यू.,* अगस्त, 28।

चौबे, एस. के. (1999), *हिल पोलिटिक्स इन नोर्थईस्ट इंडिया,* हैदराबाद, ओरियंट लोगंमैन।

दास, समीर कुमार (1994), *उल्फा यूनाईटेड लिबरेशन फ्रंट ऑफ असमः ए पोलिटिकल एनालिसिस,* दिल्ली, अजन्ता।

गोहांई, हिरेन (2019), *स्ट्रगलिंग इन ए टाइम वफः ऐसे एण्ड आब्जरवेशंस ऑन द् नोर्थईस्ट हिस्ट्री एण्ड पोलिटिक्स विद् पार्टिकुलर रिफरेंश टू असम,* गोहाटी, भबानी बुक एण्ड गिफ्टस।

हुसैन, मोनिरूल (1987), ''ट्राईबल मूवमेंट फोर आटोनोमस स्टेट इन असम'' *ई.पी.डब्ल्यू.,* असस्त 8, पी.पी. 1329-32।

हुसैन, वस्वीर (2020), हाऊ द् बोडो एकोर्ड वाज अकंपलिस्ड, एस्टोब्लेसिंग ए वाईडर टेम्पलेट फोर पीस इन द् नोर्थईस्ट, *द् टाईम्स ऑफ इंडिया,* फरवरी, 06, 2020।

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) स्वायत्ता आंदोलन लोगों की सामूहिक कार्यवाही होती है जो कि किसी क्षेत्र में स्वायत्ता प्राप्त करने के लिए चलाये जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि क्षेत्र की स्वायत्ता से संबंधित मुद्दों पर निर्णय में भाग लेने के लिए क्षेत्र के निवासियों को स्वायत्ता मिलती है।

2) स्वायत्ता आंदोलनों की निम्नलिखित विशेषताऐं हैंः- वे उन क्षेत्रों में पनपते हैं जहाँ उनके साथ अन्य क्षेत्रों या सरकार द्वारा आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक या राजनीतिक पहलूओं में भेदभाव महसूस किया जाता है। इसकी माँग आमतौर पर समाज के प्रभुत्व वर्ग द्वारा उठाई जाती है।

अभ्यास प्रश्न 2

1) 1970-72 से 'राज्य के अंदर राज्य' के नाम से मेघालय को जाना जाता है, क्योंकि यह एक पूर्ण राज्य के रूप में नहीं था बल्कि इसे असम में कुछ मुद्दों पर निणर्य लेने की स्वायत्ता प्राप्त थी। इस राज्य में एक स्वायत्त राज्य का दर्जा था जिसकी कार्यकारी शक्ति असम के राज्यपाल में थी। और उसकी सहायता के रूप में मंत्रीपरिषद थी। मेघालय की स्वायत्त स्थिति में सार्वजनिक व्यवस्था, सशस्त्र पुलिस, रेलवे पुलिस, उद्योग, और बिक्री कर को छोड़कर अन्य विषयों पर कानून बनाने की शक्ति थी। मेघालय और असम के विधायीकोश को कृषि, वन, परिवहन संचार और जलमार्ग पर समवर्ती अधिकारिता मिली।

2) 2020 के बोडो समझौते के कुछ महत्वपूर्ण पहलू इस प्रकार थेः- 1993 से 2003 के बीच के पहले दो बोडो समझौतों के विपरीत 2020 बोडो समझौते में भारत सरकार और असम सरकार के साथ समझौते पर हस्ताक्षर करने वाले सभी बोडो समूहों को शामिल किया गया था। 2003 में बी.टी.ए.डी. की स्थापना बोडो प्रादेशिक क्षेत्र जिला के स्थान पर की गई। हस्ताक्षरकर्त्ताओं ने हिंसा को समाप्त करने और प्रगति तथा विकास के लिए संयुक्त प्रतिबद्धता ली। बी.टी.आर. के इस समझौते को अधिक विधायी कार्यपालिका, वित्तिय शक्तियों का सुझाव दिया। असम सरकार के लिए बी. टी.आर. के अंतर्गत क्षेत्रों के विकास के लिए तथा इसके लिए तीन वर्ष की अवधि के लिए प्रति वर्ष 250 करोड़ रूपये की राशि निर्धारित करना आवश्यक बना दिया तथा बीटीआर की सीटों को 40 से बढ़ा कर 60 कर दिया गया।

3) असम के पहाड़ी जिलों कार्बी ऐंगलोंग और उत्तरी काधार पहाड़ियों कार्बिस और डिमासा काचारी के पहाड़ी में दो जनजातियाँ असम राज्य के अधिकार क्षेत्र में रहते हुए एक स्वायत्त राज्य के निर्माण की माँग करती हैं। यह माँग 1987 में ए.जी.पी. सरकार की स्थापना के बाद उत्पन्न हुई।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 7 विद्रोह*

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 विद्रोह क्या है?

7.3 भारत में विद्रोह की उत्पत्ति

7.4 कश्मीर में विद्रोह

7.5 उत्तर-पूर्व भारत में विद्रोह

7.5.1 नागा विद्रोह

7.5.2 मणिपुर

7.5.3 मिजो विद्रोह

7.6 पंजाब में विद्रोह

7.7 माओवादी विद्रोह

7.8 सारांश

7.9 संदर्भ सूची

7.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य भारत में विद्रोह के विभिन्न पहलुओं को समझना हैं। इस इकाई के पढ़ने के बाद आप कर सकेंगे :

- विद्रोह को परिभाषित;
- भारत में विद्रोह के कारण एवं स्वरूप को उजागर; एवं
- विद्रोह के जवाब में केन्द्र सरकार के रूख को समझना।

7.1 प्रस्तावना

1947 में भारतीय संघ के बनने के पश्चात्, विद्रोह एक बड़ी चुनौती बन गया है। जैसा कि आप उप-इकाई 7.2 में पढ़ेंगे, विद्रोह एक प्रकार का राज्य अथवा संविधानिक प्राधिकार के विरूद्ध उठाया गया कदम है, जिसमें समाज का कुछ अथवा बड़ा तबका भाग लेता है। सामान्यतौर पर विद्रोह के अंदर हिंसा देखी जाती हैं जिसमें समाज के कुछ लोग अथवा बड़ा तबका तथा राज्य (स्टेट) शामिल होते हैं।

हमारे देश में आंतरिक विद्रोह के कई उदाहरण है, उत्तर-पूर्व भारत में, पंजाब मेंतथाजम्मू एवं कश्मीर। हालांकि कई अन्य राज्यों में भी विद्रोह के स्वर सुनाई पड़ते है, लेकिन उनका स्तर इन राज्यों की तुलना में कम है।

*डॉ. एन. किशोर सिंह चंद, कंसलटेंट, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली

7.2 विद्रोह क्या है?

विभिन्न विद्वान विद्रोह को कई तरह से परिभाषित करते है। मतभेदों के बावजूद, सभी इस बात से सहमत है कि विद्रोह के कुछ समान लक्षण है। विद्रोह एक प्रकार का किसी शासन या सत्ता के खिलाफ सशस्त्र बगावत है। और जो लोग इस बगावत में शामिल होते हैं उन्हें "विद्रोही" कहा जाता है। इस प्रकार विद्रोह राज्य सत्ता के खिलाफ किया गया आंदोलन है जिसका प्रमुख उद्देश्य राजनीतिक बदलाव या परिवर्तन होता है (मर्सटन, 2005)। एस. के. चौबे ने विद्रोह को परिभाषित करते हुए कहा कि यह किसी व्यवस्था या स्थापित सत्ता के विरूद्ध संग्राम होता है। उन्होंने आगे यह भी कहा कि, विद्रोहियों के विचार बिल्कुल भिन्न भी हो सकते हैं, या वे किसी स्थापित सत्ता या व्यवस्था को नहीं मानते हों, उनके लिए विद्रोह सिर्फ व्यवस्था परिवर्तन करना है (चौबे, 1997)। भारत का रक्षा मंत्रालय की डाक्ट्रिन फॉर कवेंशनल ऑपरेशन्स विद्रोह को सेना के संदर्भ में परिभाषित करती है। यह विद्रोह को सशस्त्र संघर्ष मानता है जो किसी विशेष वर्ग के राज्य के विरूद्ध किया है। यह किसी विदेशी समर्थन से किया जाता है। इसका लक्ष्य सत्ता हासिल करना, या सत्ता परिवर्तन करना या फिर किसी निश्चित क्षेत्र को स्वतंत्र करना है(रक्षा मंत्रालय, 2006 : 64)।

विद्रोह को प्रायः आंतकवाद के रूप में भी पहचाना जाता है। हालांकि दोनों में बहुत अंतर है। विद्रोही एवं आंतकवादी समूह हिंसावादी कार्यवाही में समान रूप से हिस्सा लेते हैं, लेकिन दोनों के स्वभाव में काफी फर्क है। आतंकवाद के विपरीत विद्रोही आंदोलन के पीछे समाज के एक बड़े वर्ग का समर्थन या हाथ होता है। इस संदर्भ में आंदोलनकारी समूह जनता को लामबंद करते हैं, उन्हें सूचना पहुँचाते है तथा मनोवैज्ञानिक तरीके से लोगों को अपने साथ जोड़ते हैं (सिंह, 2018, 294, MOD 2006: II) जबकि आंतकवादी समूहों के पास जनता का समर्थन नहीं होता है। विद्रोह या बगावत का लक्ष्य स्थापित सत्ता को चुनौती देकर राजनीतिक बदलाव लाना है। लेकिन आतंकवादी हिंसा का सहारा लेते हैं, नागरिकों को निशाना बनाते हैं, उनमें डर पैदाकरते है, तथा आंदोलन लोगों को प्रभावशाली एवं तार्किक बनाते हैं।

विद्रोह से संबंधित एक अवधारणा 'प्रत्युत्तर विद्रोह' (Counter –insurgency) है। प्रत्युत्तर विद्रोह वे कदम हैं जो राज्य विद्रोह को समाप्त करने के लिए किया जाता है। यह एक विस्तृत सामाजिक और सैन्य प्रयत्न है जो एक साथ विद्रोह समाप्त करने तथा उसके कारणों की खोज करने के लिए किया जाता है। फिर भी विद्रोह को समाप्त करने की कोई एक नीति नहीं है। इसको समाप्त करने के लिए सैन्य, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक या सरकार के प्रत्यत्नों की आवश्यकता है जो विद्रोह समाप्त करने के लिए किए जाएं। इन प्रयत्नों से विद्रोह के कारणों की खोज की जा सकती तथा उसको समाप्त या कम किया जा सकता है। केवल बल प्रयोग से कुछ समय के लिए विद्रोह की समस्या को हमेशा के दूर नहीं किया जा सकता है। इस लिए, भारत सहित अधिकांश देशों में प्रत्युत्तर विद्रोह को सामाजिक एवंसैन्य प्रत्यनों द्वारा किया गया। इन प्रयत्नो के साथ-साथ सरकारों द्वारा लोगों के 'दिल और मन' (Hearts and Minds) को जीतने के लिए परसेप्शन को प्रबंध किए जाते है (एम ऑ डी, 2006). भारत में सेना जो कदम उठाती है उनमे आफ्सपा (Armed Forces Special Power Act), 1958 शामिल है, जिसे विद्रोह प्रभावित क्षेत्र में लागू किया जाता है। आफ्सपा के अनुसार सेना किसी विद्रोह में संदिग्ध व्यक्ति हिरासत में ले सकती है। इसका अनेक संगठनों द्वारा - मानव अधिकार संगठनों, सिविल सोसाइटी संगठनों द्वारा विरोध किया जाता है। राजनीति, आर्थिक उपायों में विद्रोह से प्रभावित क्षेत्रों में कल्याणकारी परियोजनाओं को लागू करना, तथा विद्रोही गुटों के साथ वाद-विवाद सम्मिलित हैं।

अभ्यास प्रश्न 1

टिप्पणीः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) विद्रोह की परिभाषा दीजिये।यह आंतकवाद से किस तरह भिन्न है?

.....

.....

.....

.....

.....

7.3 भारत में विद्रोह की उत्पत्ति

भारत में विद्रोह के उत्पत्ति के अनेक कारण हैं। कुछ कारण वास्तविक है जबकि कुछ कारण बनावटी है। इतिहास, विचारधारा, राजनीति, पहचान, धर्म, भाषा या अन्य कोई कारण विद्रोह के हो सकते हैं। इनमें से अपनी अस्मिता या पहचान के प्रति चेतना जिसका आधार राष्ट्रवाद है इनमें से प्रमुख कारण है। विद्रोह के नेता, कार्यकर्त्ता होते हैं तथा इसको आम समर्थन भी होता है। इसके कई उद्देश्य विशेष होते है। कुछ विद्रोह अलग राज्य की माँग करते हैं, तथा किसी का उद्देश्य क्षेत्रीय स्वायत्ता होता है तथा कुछ की मांग है पूर्ण स्वतंत्रता या राज्य से अलग होना। नेताओं एवं कार्यकत्ताओं के प्रयास से ये माँगें ही विद्रोह का कारण बनती है। विद्रोह वास्तव में सामूहिक एकता कायम करना है। विद्रोह कभी-कभी हिंसा का भी रूप ले लेते है जिसमें राज्य को भारी नुकसान होता है। विद्रोह की घटना तथा उसका स्तर कोई स्थायी लक्ष्य नहीं है।

भारत के अनुभव के आधार पर पॉल स्टैनीलैंड (2017) ने भारत में तीन प्रकार के विद्रोहों की पहचान है। (1) उत्तर-पूर्व एवं पंजाब में आदिवासी या नृजातीय-राष्ट्रवादी, अलगाववादी विद्रोह (2) जम्मू और कश्मीर धार्मिक अल्पसंख्यक अलगाववादी विद्रोह तथा (3) मध्य भारत एवं पूर्वी भारत में विचारवादी या माओवादी विद्रोह। लेकिन इन सबमें एक बात समान है कि वे स्थापित सत्ता के विरूद्ध असंतुश्टि तथा राजनीतिक बदलाव, सामान्यतः आत्म-निर्णय का अधिकार।

7.4 जम्मू और कश्मीर में विद्रोह

जम्मू और कश्मीर में, जो 5 अगस्त, 2019 को दो केंद्र शासित राज्य-जम्मू और काष्मीर तथा लद्दाख बनने से पहले एक राज्य था, विद्रोह 1980 के अंत में उभरकर सामने आये। उससे पहले राज्य में राजनीतिक अस्थिरता थी। 1974 में, एक महत्वपूर्ण घटना घटी जब शेख अब्दुला ने इंदिरा गाँधी के साथ समझौता किया जिसे ''कश्मीर समझौता'' कहते है। इसके तहत शेख अब्दुला जेल से रिहा हुए थे और फिर से मुख्यमंत्री बने। परंतु उनके रिहाई पर एक शर्त थी कि वह ''आत्म-निर्णय'' की माँग को छोड़ देंगे। इस माँग को छोड़ने के कारण जम्मू और कश्मीर में नाराजगी दिखाई देने लगी। इस समझौते के कुछ वर्ष पश्चात् केन्द्र सरकार ने फारूख अब्दुला सरकार को बरखास्त कर दिया, जो कि शेख अब्दुला की मौत के बाद बनी थी। इन दोनों घटनाओं ने पूरे कश्मीर को हिला दिया और यह समझा जाने

लगा कि केन्द्र कश्मीर मसलों में हस्तक्षेप कर रहा है। इसे लोकतंत्र को समाप्त करने वाला कदम भी देखा गया (गांगुली 1996 : 104)

1987 के चुनावों के बाद जम्मू एवं कश्मीर में यह नाराजगी और बढ़ गयी। इस चुनाव के बाद, कश्मीर घाटी में भारतीय राज्य के विरूद्ध सशस्त्र विद्रोह की घटना सामने आयी। 1990 तक, कश्मीर में दो प्रकार के विद्रोही समूह उभर कर सामने आये। पहला जम्मू और कश्मीर लिबरेशन फ्रंट (जे.के.एल.एफ.), दूसरा पाकिस्तान समर्थित, हिजबुल मुजाहिदिन ग्रुप (समूह), जो अखिल इस्लामवाद को मानता था (स्टेनिली 2012: 158; गांगुली 1996)। युवा कश्मीरी शिक्षित पीढ़ी के लोग जैसे यासिन मलिक, शब्बीर शाह, और जावेद मीर ने 1987 के विधानसभा चुनावों में बढ़चढ़कर हिस्सा लिया था। परन्तु चुनावों में धांधली के कारण उनकी चुनावी प्रक्रिया से आस्था उठ गई थी तथा उन्होंने अपनी आपत्ति विद्रोह के रूप में दिखाई (गांगुली 1996: 104)। लेकिन अब पूरी तरह से इनके खिलाफ हो गये। उसी समय कश्मीर की राजनीति में धर्म का प्रयोग अधिक बढ़ गया था तथा एक "राजनैतिक संघर्ष" कश्मीरी मुसलमानों के धार्मिक संघर्ष से जुड़ गया। 1993 में लगभग 26 अलगाववादी समर्थक दलों ने एक साझा मोर्चा बनाया जिसे हम हुर्रियत के नाम से जानते हैं। हुर्रियत भी दो गुटों कें बंटा हुआ था। एक गुट को हम कट्टरपंथी कह सकते है जो कि कश्मीर को पाकिस्तान में विलय की बात करता है जबकि दूसरा गुट 'उदारवादी' है, जो "स्वतंत्र" कश्मीर की बात करता है। 1999 के कारगिल युद्ध के पश्चात् कश्मीर में पाकिस्तान समर्थन स्थानीय समूहों का वर्चस्व बढ़ता गया तथा सीमा-पार से भी इन्हें समर्थन मिलता रहा (इवांस 2000)। पाकिस्तान भी कश्मीर में इस्लामिक गुटों का समर्थन करता रहा जो पाकिस्तान की तरफ ज्यादा हमदर्दी दिखाते थे। ये गुट स्वतंत्रता के पक्षधर जे.के.एल.एफ. को भी अनदेखा कर रहे थे (पटानकर 2009: 68)।

1990 के दशक में, पाकिस्तान समर्थक आंतकवादी गुटों जैसे लष्कर-ए-तैयबा, हरकत-उल-मुजाहिदिन, जैष-ए-मौहम्मद ने कई फिदायीन हमले या आत्मघाती बम-धमाकें किये। ये सब भारतीय राज्य के विरूद्ध एक प्रकार का पाकिस्तान की तरफ से छद्म-युद्ध था। 2003 तक विद्रोह से संबंधित हिंसा भी जारी रही, उसी दौरान भारत एवं पाकिस्तान के बीच हिंसा को कम करने के लिए युद्ध विराम समझौता किया गया। यद्यपि, हिंसा में कमी आ गयी हो, लेकिन विद्रोह अभी खत्म नहीं हुआ है।

2008 में फिर से एक बार कश्मीर घाटी में तनाव बढ़ गया, लेकिन इसका रूप अलग था। इसमें कश्मीरी युवा सड़कों पर आंदोलन करने को आगे आये। इस युवा पीढ़ी हथियारों की बजाय पत्थरों का प्रयोग किया, यह एक प्रकार का नया आंदोलन का तरीका था जो कि सामने आया था (राय, 2018)। लेकिन यह नया तरीका कम हिंसात्मक है 1980 और 1990 के दशक के हिंसावादी आंदोलनों की तुलना में। हम अभी यह नहीं मान सकते कि कश्मीर से विद्रोह समाप्त हो गया है, बल्कि यह और अधिक जटिल समस्या बन गयी है भारत के लिए आज।

7.5 उत्तर-पूर्व में विद्रोह

उत्तर-पूर्व के आठ राज्यों आसाम, अरूणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, त्रिपुरा, नागालैण्ड तथा सिक्किम में से तीन राज्यों में विद्रोह अधिक देखने को मिला है। ये राज्य हैं, नागालैंण्ड, मिजोरम एवं मणिपुर। इनके बारे में आप उपखण्ड 7.5.1, 7.5.2 तथा 7.5.3 में पढ़ेगे। इन राज्यों में विद्रोह 1950 एवं 1960 के दशकों में हुआ थी। त्रिपुरा में 1971 के युद्ध के बाद उसकी जनसंख्या घट गयी और यह बंगाली बहुल राज्य में बदल गया और

इसके बाद त्रिपुरा नेशनल वालंटियरर्स (टी एन वी) का गठन किया जिसका बाद में 1978 में मिजो नेशनल फ्रंट के साथ समझौता हुआ। करीब एक दशक की हिंसा के बाद, टी.एन. वी. ने 1988 में एक समझौते के पश्चात समर्पण कर दिया। लेकिन इसके बाद भी शांति कायम नहीं हो सकी और 1989 में एक नया फ्रंट नेशनल लिबरेशन फ्रंट ऑफ त्रिपुरा (एन. एल.एफ.टी.) का गठन हुआ। उसके बाद एक अलग गुट आल त्रिपुरा ट्राइबल फ्रंट (ए.टी. एफ.एफ.) भी गठित हुआ। ये दोनों गुट राज्य में सक्रिय हो गये और इनका मुख्य एजेन्डा का राज्य से बंगाली आप्रवासियों को बाहर करना था। अन्य राज्यों में विद्रोह काफी बाद में शुरू हुए। असम एवं मेघालय में, 1980 एवं 1990 के दशक में क्रमशः विद्रोह शुरू हुए। मेघालय में, हिन्यूत्रिप अचिक लिबरेशन काउंसिल (एच.ए.एल.सी.) के उभरने के पश्चात् विद्रोह विकसित हुआ 1992 में। आसाम में उल्फा जिसकी स्थापना 7 अप्रैल, 1979 में हुई थी, का लक्ष्य था असम को संप्रभु राज्य बनाना जबकि बोडो आंदोलन चाहता था एक अलग स्वायत्त बोडोलैण्ड बने। 1986 में नेशनल डेमोक्रेटिक फ्रंट ऑफ बोडोलैण्ड (एन.डी.एफ.बी.) का गठन किया गया। एच.ए.एल.सी का प्रमुख लक्ष्य था मेघालय में आदिवासी लोगों के हितों की रक्षा करना और बाहरी लोगों से सुरक्षा करना। बाद में इसे हिन्यूत्रिप नेशनल लिबरेशन काउंसिल (एच.एन.एल.सी.) में बदल दिया गया। इसके अलावा, अन्य गुट ए.एन. वी.सी. भी राज्य में उभर कर सामने आया।

7.5.1 नागा विद्रोह

उत्तर-पूर्व भारत में नागा विद्रोह काफी पुराना है। कुछ लोग इसे भारत या उत्तर-पूर्व भारत में सभी विद्रोहों के जननी भी मानते हैं। 20वीं सदी के दूसरे दशक में नागा विद्रोह का राजनीतिक लामबंदी देखी गयी। 1918 में नागा लोगों ने नागा क्लब की स्थापना की। 1929 में, नागा क्लब ने साइमन कमीशन के सामने संप्रभुता की माँग रखी। 1946 में नागा क्लब का विस्तार होकर एक राजनीतिक संगठन (नागा नेशनल कॉसिल) का गठन हुआ, जिसका नेतृत्व अंगामी फिजो ने किया। इसका प्रमुख लक्ष्य था अलग नागालैण्ड का गठन करना। फरवरी 1947 में नागा नेशनल कांसिल ने एक ज्ञापन सौंपा ब्रिटिश प्रशासन को जिसमें अंतरिम सरकार के गठन की माँग रखी गयी। इसक परिणामस्वरूप, एक समझौता पर हस्ताक्षर किये गये जिसे नौ सूत्रीय समझौतों कहा गया। इसे जून 1947 में नागा-अकबर हैदरी और एन.एन.सी के बीच ब्रिटिश प्रशासन की तरफ से हस्ताक्षर किये गये। नागा-अकबर हैदरी समझौते ने नागालैण्ड को दस वर्षों के लिए संरक्षित दर्जा प्रदान किया। इस समझौते ने नागा वासियों के अधिकारों को प्रमुखता दी ताकि यह समुदाय स्वतंत्र रूप से अपना विकास कर सके तथा नागाप्रथागत कानूनों का पालन कर सके। केन्द्र ने असम के राज्यपाल को यह अधिकार दिया गया कि वे सरकार के एजेन्ट के रूप में इस समझौते की दस साल सीमा समाप्त होने पर, एन एन सी से पूछा जायेगा कि इस समझौते को विसतार किया जाय या नागाओं का भविष्य से संबंधित एक नया समझौता किया जाय। इस समझौते की समीक्षा की जायेगी तथा इसे आगे बढ़ाया जायेगा ताकि नागाओं के भविश्य को सुरक्षित रखा जाये (Naga-Akbar hydari Accord, https://peacemaker.un.org/files/IN_Naga-Akbar%Accord.pdf, accessed on April 4, 2016)।

नागा-अकबर हैदरी समझौते पर दस्तखत होने के एक महिने के बाद एन.एन.सी ने फिजो के नेतृत्व में 14 अगस्त 1947 को स्वतंत्र नागालैण्ड की घोषणा की। यह भारत के स्वतंत्र होने से एक दिन पूर्व की बात है। भारत के स्वतंत्र होने के बाद, नागा क्षेत्र असम राज्य का हिस्सा था लेकिन एन.एन.सी ने यह स्वीकार नहीं किया कि नागाओं वाले क्षेत्र भारतीय संघ के हिस्से रहे। इसके परिणामस्वरूप फिजो ने भारतीय सरकार के खिलाफ सशस्त्र आंदोलन छेड़ दिया, स्वतंत्र नागा राज्य के लिये। भारत सरकार ने आखिरकार 1963 में स्वतंत्र

नागालैण्ड राज्य की घोषणा की। 1964 में, भारत सराकार एवं एन.एन.सी. के बीच समझौते पर हस्ताक्षर हुए, जिसमें शांति का प्रस्ताव था। इसके फलस्वरूप, विद्रोह को समाप्त कर दिया गया। 1975 में एक बार फिर से भारत सरकार एवं एन.एन.सी. के बीच समझौता हुआ, जिसे, "शिलोंग समझौता" के नाम से जाना जाता है। लेकिन इस समझौते के बावजूद नागालैण्ड में स्थायी शांति नहीं आ सकी। एन.एन.सी. के एक गुट के नेताओं जैसे इसाक चीसी सू.थि थुईगलेंग मुइवा और एसएस खापलाँग ने शिलोंग समझौते को मानने से मना कर दिया। उनका मानना था कि यह समझौता बेचने (sell-out) के समान है। उन्होंने 1980 में नेशनल सॉफिएलिस्ट कॉसिल ऑफ नागालैण्ड (एन.एस.सी.एन.) का गठन किया।

लेकिन 1988 में पुन (एन.एस.सी.एन.) का विभाजन हुआ और यह दो गुटों में बंट गयी, एक, एन.एस.सी. (आई. एम.) जिसका नेतृत्व थुइलेंग मुइवा ने किया तथा दूसरा एन.एस.सी. (के) जिसका नेतृत्व एस.एस. कापलांग ने किया। उसके बाद ये दोनों गुटों ने स्वतंत्र नागा के लिये आंदोलन जारी रखा। इसके बाद एन.एस.सी.एम.-आई.एम. ने 1997 में तथा एन.एस. सी.एन.के. ने 2001, ये दोनों गुट भारत सरकार के साथ शांति के समझौते पर राजी हुए। इन समझौतों के आधार पर एन.एस.सी.एन. (आई. एम.) ने अलग राज्य की माँग को छोड़ दिया तथा एक नई माँग उठाई, ''ग्रेटर नागालैण्ड'' की या ''नागालिम'' की। इस 'ग्रेटर नागालैण्ड' या 'नागलिम' में विभिन्न क्षेत्रों को मिलाकर एक एकीकरण की बात कही गयी जिसमें नागालैण्ड, असम, अरूणाचल प्रदेश और मणिपुर के कुछ भाग शामिल है। इस माँग के खिलाफ अन्य राज्यों में विरोध शुरू हो गया इसके परिणाम स्वरूप अंतर्जातिय तथा अंतर्राजतीय विवाद उत्पन्न हुआ एवं इससे हिंसा भी फैली। इसके बाद 3 अगस्त, 2015 को भारत सरकार और विभिन्न नागा गुटों के बीचएक नया समझौता हुआ, जिसे 'नागा फ्रेमवर्क समझौता' कहते है। इसका मुख्य उद्देश्य नागा गुटों द्वारा उठाये गये मुद्दों को हल करना था।

7.5.2 मणिपुर में विद्रोह

मणिपुर में सबसे अधिक विद्रोही गुट है जो विभिन्न समुदायों का प्रतिनिधित्व करते हैं। मणिपुर में विद्रोह 1949 से शुरू हो चुका था जब मणिपुर के महाराजा ने भारतीय संघ के साथ ''विलय समझौते'' शिलाँग पर हस्ताक्षर किये थे। मणिपुर में सामान्य तौर पर यह आरोप लगा कि महाराजा ने दबाव में ये हस्ताक्षर किये थे। मणिपुर मे महाराजा द्वारा मणिपुर के इंडियन डोमिनियम में शामिल किए जाने के विरोध में आंदोलन हुआ। हिजाम इराबोट जो कि एक कम्युनिस्ट लीडर ने, उन्होंने स्वतंत्र मणिपुर राज्य बनाने के लिए सशस्त्र संघर्ष किया। लेकिन उन पर सरकार ने कानून तोड़ने का मुकदमा दर्ज किया इस कारण वे 1950 में बर्मा भागकर चले गये और उनका वहीं पर कुछ समय बाद निधन हो गया था। यद्यपि इरावोट का आंदोलन अपना लक्ष्य प्राप्त करने में असफल रहा था लेकिन इसने मणिपुरी राष्ट्रवाद के बीज बो दिये थे। बाद में, 1964 में, अलगाववादी गुट यू.एन.एल. एफ. (युनाइटेड नेशनल लिबरेशन फ्रंट) का गठन किया गया जिसने अध्यक्ष अरबंम समरेन्द्र थे। इनका लक्ष्य मणिपुर की ''संप्रभुता'' को दुबारा हासिल करना था। 1968 में क्रांतिकारी मणिपुर सरकार का गठन किया गया जिसका उद्देश्य एक समानान्तर सरकार का कार्य करना था। बाद में समाजवादी विचारधारा का समर्थन करते हुए राज्य में अन्य अलगाववादी गुट भी उभर कर सामने आये। उदाहरण के तौर पर, पिपल्स रिवॉल्यूशनरी पार्टी ऑफ काँगलीपाक (PREPAK), पीपल्स लिबरेशन आर्मी (PLA), और काँगलीपाक कम्युनिस्ट पार्टी (के सी पी) जिनका गठन 1977, 1978, एवं 1980 क्रमशः में किया गया था। कई अन्य विद्रोही संगठन जिनका प्रतिनिधित्व आदिवासी कर रहे थे वे भी 1990 में उभर कर सामने आये, जिनकी माँग भी अलग राज्य एवं स्वायत्ता थी। इस सदी के दूसरे दशक में, भूमिगत

संगठन भी कार्यरत है जो कूकी, जोमी हमर इत्यादि का प्रतिनिधित्व करते हैं लेकिन ये भारत सरकार के साथ समझौते में हैं जिसे सस्पेंशन ऑफ ऑपरेशन (SoO) के नाम से जाना गया। मणिपुर में विद्रोह को समाप्त करने के लिए सिंतबर, 1980 से आफस्पा (विशेष सुरक्षा बल कानून) 1958 लागू हैं।

7.5.3 मिजो विद्रोह

मिजो विद्रोह की शुरुआत 1960 में हुई थी जब मिजो नेशलन फेमीन फ्रंट (एम एन एफ) का गठन हुआ था। इसका नेतृत्व लालडेंगा ने किया जिसका मकसद मिजो गाँवों में मोतम (अकाल) से राहत प्रदान करना था। इसका कारण यह था कि 1959-60 में मिजो पहाड़ी क्षेत्रों में जबरदस्त अकाल/मातम अकाल (बेम्बू फ्लावरिंग) पड़ा जिस कारण लोगों को बहुत कष्ट उठाना पड़ा। आसाम तथा केंद्रीय सरकार ने इस समस्या का समाधान ठीक से नहीं किया जिससे मिजों लोगों में बहुत निराशा हुई। मिजो वासियों ने यह महसूस किया केन्द्र सरकार एवं असम सरकार ने कोई ठोस कदम नहीं उठाये अकाल में मदद करने के लिये। क्योंकि उस वक्त मिजो एवं लसाई पहाड़ी क्षेत्र 1972 तक असम के ही हिस्सा थे। अकाल से उभरी समस्याओं को सरकार द्वारा न सुलझाने के लिए असम सरकार पर सौतेला व्यवहार करने का भी आरोप लगा। असम सरकार द्वारा असमी भाषा को सरकारी भाषा बनाने के कारण भी मिजो लोगों में अपनी संस्कृति एवं पहचान बरकरार रखने की चिंता होने लगी। इन परिस्थितियों में, मिजो संगठनों ने यह दलील पेश की कि मौजूदा प्रशासन उनके मुद्दों को हल नहीं कर सकता। उनकी समस्याऐं तभी हल हो सकती है जब उनका अपना संप्रभु राज्य या स्वतंत्र राज्य हो।

1961 में अकाल के समाप्त होने के पश्चात् लालडेंगा ने एम.एन.एफ.एफ. को राजनीति पार्टी में तब्दील किया। इसमें से 'फेमीन' शब्द निकालकर पार्टी का नाम केवल ''मिजो नेशनल फ्रंट'' रखा गया। 1966 में मिजो नेशनल फ्रंट ने मिजो राज्य के गठन के लिए जबरदस्त आंदोलन छेड़ा। अलग राज्य की माँग के कारण एम.एन.एफ. एवं भारतीय सुरक्षा बलों के बीच हिंसात्मक झड़पें हुई। 1976 में इन सब परिस्थितियों को देखकर कलकत्ता में भारत सरकार एवं एम.एन.एफ. के बीच समझौता हुआ। इसके बाद हिंसा में कुछ कमी आई। आखिरकार करीब दो दशक के उथल-पुथल के बाद 1986 में ''मिजोरम समझौता'' पर हस्ताक्षर किये गये, भारत सरकार एवं एम.एन.एफ. के बीच में। फरवरी 1987 में मिजोरम भारत का 23 वाँ राज्य बना और इसके प्रथम मुख्यमंत्री लालडेंगा बनाये गये। इसके बाद से मिजोरम सबसे शांत राज्य बन गया है। 'मिजो समझौता' भारतीय इतिहास का सबसे सफल राजनैतिक समझौता भी माना जाता है। इस प्रकार मिजो विद्रोह "स्ट्रॉक ऑफ पैन" द्वारा समाप्त हो गया है।

7.6 पंजाब में विद्रोह

पंजाब में विद्रोह 1970 के दशक के अंत में शुरू हुआ एवं 1980 के दशक तक यह चरम सीमा तक पहुँच गया था। इस विद्रोह को हम खालिस्तान आंदोलन के रूप में भी जानते है,जिसमें अलग सिख राज्य ''खालिस्तान' की माँग की गई थी। खालिस्तान राज्य की माँग 1971 में आनन्दपुर साहिब प्रस्ताव के बाद की गयी थी। यह हिंसावादी आंदोलन था जिसमें हजारों लोग मारे गये थे। खालिस्तान आंदोलन का नेतृत्व भिंडरावाले ने किया था। 1983 में, गिरफ्तारी से बचने के लिये भिंडरावाले ने अपने समर्थकों सहित स्वर्ण मंदिर में नजरबंद हो गया, वहीं से उसने विद्रोह का प्रचार किया। बढ़ती हिंसा को रोकने के लिए 6 जून, 1984 को इंदिरा गाँधी सरकार ने सैनिक कार्यवाही के आदेश दिये, जिसे हम ''ऑपरेशन

ब्लू स्टार'' कहते हैं। इस कार्यवाही का मकसद था स्वर्ण मंदिर परिसर को आंतकवादियों से मुक्त करवाना। इस कार्यवाही में भिंडरावाले सहित करीब 200-250 खालिस्तानी आंतकवादी मारे गये थे। इस कार्यवाही का सिख समुदाय में भारी विरोध हुआ तथा इंदिरा गाँधी सरकार के खिलाफ नाराजगी बढ़ती गयी। इसके परिणामस्वरूप 1984 में अपने ही अंगरक्षकों द्वारा, जो कि सिख थे, इंदिरा गाँधी की हत्या की थी। इस ऑपरेशन ब्लू स्टार' के कुछ वर्षों बाद विद्रोह धीमा हो गया तथा 1991 में पंजाब पुलिस के मुखिया के.पी.एस. गिल ने 'ऑपरेशन ब्लैक थंडर'' की शुरुआत की थी।

पंजाब में विद्रोह पैदा होने के कई प्रकार के कारण दिये गये हैं। इनमें राजनीतिक, सामाजिक-सांस्कृतिक एवं आर्थिक कारण प्रमुख हैं। अतुल कोहली ने राजनीतिक कारणों की बात कहते हुए यह दलील पेश की कि दूसरे स्वभाग्य निर्पण आंदोलन की तरह, ''पंजाब मे विद्रोह का प्रमुख कारण केन्द्र का राज्य की राजनीति में दखल देना तथा केन्द्रीय नेतृत्व का अन्य मामलों में भी लोगों को शामिल न करना था। एक अन्य कारण यह भी था कि पंजाब में काँग्रेस एवं अकाली दल के बीच में प्रतिस्पर्धा के कारण भी खालिस्तान आंदोलन उभरा। अन्य सामाजिक सांस्कृतिक एवं आर्थिक कारणों में मुख्य रूप से ग्रीन रिवोल्यूशन (हरित क्रांति) का प्रभाव, पंजाबी संस्कृति का ह्रास भी लोगों के गुस्से का कारण बना। खालिस्तान आंदोलन के समर्थकों का मानना था कि, स्वतंत्र खालिस्तान राज्य के बनने के बाद पंजाब में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक संकटों को दूर करने में मदद मिलेगी।

7.7 नक्सल प्रभावित क्षेत्र

देष के कुछ भागों में जैसे झारखंड, आंध्रप्रदेश के कुछ क्षेत्र, महाराष्ट्र एवं उड़िसा में कुछ लोग माओवादी विद्रोह में शामिल हो रहे हैं। यह विद्रोह माओवादी विचारधारा से प्रभावित हुआ। यह विचारधारा चीन के कम्युनिस्ट नेता माओ त्से तुंग द्वारा प्रतिवादित की गई थी। इस तरह की कार्यवाही माओवादी या नक्सलवादी होती है। उनका प्रमुख लक्ष्य वर्ग आधारित भेदभाव को समाप्त करना है तथा राज्य की नीतियों का विरोध करना है तथा एक ऐसे राज्य की स्थापना करना जिसकी नीतियां और चरित्र माओवाद से प्रभावित हों, इन्हें माओवादी विचारधारा का समर्थक माना जाता है। इनकी रणनीति सशस्त्र विद्रोह की होती है, तथा ये राज्य एवं प्रशासन के विरूद्ध संगठित तरीके से विरोध करते हैं इनमें पुलिस एवं अभिजात्य वर्ग भी शामिल हैं क्योंकि वे इन्हें अपना वर्ग शत्रु मानते हैं। 'नक्सल' शब्द पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले के नक्सलवाड़ी गाँव से लिया गया है जहाँ पर 1967 में संथाल नामक आदिवासी समुदाय में शोषण एवं अन्याय के विरूद्ध किसान विद्रोह किया था।

यह एक छोटे आंदोलन के रूप में उभरा था, एवं धीरे-धीरे इसका आकार बढ़ता चला गया एवं कई घटनाऐं भी हुई। इस नक्सलवाड़ी आंदोलन का नेतृत्व सी.पी.आई. (माले) के नेता चारू मजूमदार ने 1969 में किया। कुछ ही वर्षों में, नक्सल आंदोलन देश के अन्य राज्यों जैसे बिहार, आंध्रप्रदेश में भी फैल गया। चारू मजूमदार को अन्य नक्सल नेताओं के साथ 1972 में गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया। 1977 में नक्सल नेताओं के जेल से रिहा होने के पश्चात् नक्सल आंदोलन भी चार गुटों में बंट गया। माओवादी कम्युनिस्ट सेन्टर (एम. सी.सी.) पिपुल्स वार ग्रुप (पी.डब्ल्यू.जी.), पार्टी यूनिटी (पी.यू.), तथा सी. पी. आई. एम. (लिबरेशन)। 2004 में एम.सी.सी., पी.डब्ल्यू.जी. एवं पी.यू. ने विलय की घोषणा कि एवं एक नया संगठन सी. पी. आई. (माओवादी) बनाया। इन्होंने संसदीय लोकतंत्र की विचारधारा को खारिज किया था। सी.पी.आई. (माओवादी) ने राज्य के खिलाफ सशस्त्र आंदोलन शुरू

किया। 2009 में भारत सरकार ने माओवादी विद्रोह के खिलाफ ''ऑपरेशन ग्रीन हंट'' शुरू किया ताकि इस पर काबू पाया जा सके।

अभ्यास प्रश्न 2

1) जम्मू और कश्मीर में विद्रोह की उत्पत्ति के कारणों की व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) उत्तर-पूर्व भारत में विद्रोह के क्या कारण थे?

.....

.....

.....

.....

.....

3) पंजाब में विद्रोह के प्रमुख कारण कौन-कौन से थे?

.....

.....

.....

.....

.....

7.8 सारांश

भारत के विभिन्न राज्यों में विद्रोह की घटनाऐं देखने को मिली हैं। विद्रोह एक प्रकार का विरोध है जिसमें हिंसा भी देखने को मिलती है, जिसमें राज्य की सत्ता को चुनौती दी जाती है और राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने की कोशिश की जाती है। जो राज्य विद्रोह की घटना से सबसे ज्यादा प्रभावित हुए हैं उनमें जम्मू एवं कश्मीर (जिसको 2019 में दो केंद्र शासित क्षेत्रों में विभाजित किया गया), नागालैण्ड, मिजोरम, मणिपुर, असम, पंजाब एवं कुछ नक्सलवाद से प्रभावित राज्य से हैं। विद्रोह के कुछ लक्षण भी हैं जैसे संगठन नेता, विचारधारा, एवं लामबंद करने की रणनीति। राज्य द्वारा विद्रोह को खत्म करने के लिये उठाये गये तरीकों को प्रत्युत्तर विद्रोह कहा जाता है। इन तरीकों में, सैनिक एवं नागरिक नीतियाँ भी शामिल है। विद्रोह इसलिये होता है क्योंकि लोगों की समस्याऐं राज्य दूर करने में असफल होता है, इस कारण लोग राज्य के प्रति अपनी नाराजगी जाहिर करते हैं।

7.9 संदर्भ

चौबे, एस. के. (1999),''हिल पोलिटिक्स इन नॉर्थईस्ट इंडिया'', हैदराबाद, ओरियंट, लांगमैन।

गांगुली, सुमित (1999), द क्राइसिस इन कश्मीरः पोटेन्टस ऑफ वार, होप्स ऑफ पीष, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

कोहली, अतुल (1990), डेमोक्रेसी एंड डिसकोन्टेंटः इंडिया'स ग्रोइंग क्राइसिस ऑफ गर्वनेविल्टी, न्यू-यार्क, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

रक्षा मंत्रालय, (2006), डॉक्टराइन फोर सब कोन्वेंशनल ऑपरेशनस, नई-दिल्ली

ऑटकेन, जैनीफर (2009), काउन्टर इंसर्जनसी अगेंस्ट नक्सलाइट्स इन इंडिया, लंदन, राउटलेज।

फाड़निस, उर्मिला, गांगुली, रजत (2001), ऐथनिसिटि एंड नेशन-बिल्डिंग इन साउथ एषिया, नई-दिल्ली, सेज प्रकाशन।

राय, मृदु (2018), कश्मीर : प्रिंसली स्टेट टू इनसर्जेंसी, ऑक्सफोर्ड रिसर्च, एन साइक्लोपीडिया

रूस्तमजी, नारी (1983), इम्प्रैफिल्ड फ्रंटियर : भारत का उत्तर-पूर्व बोडोलैण्ड, दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

सिंह, गुरहरपाल (1987), ''अन्डरस्टैंडिंग द पंजाब प्रॉब्लम'' एसियन सर्वे,अवसण 27ए छवण 12ए चचण 1268.77

वार्ष्णेय, आशुतोष (1991), इंडिया, पाकिस्तान एंड कश्मीरः एंटिनोमिस ऑफ नेशनलिज्म, एषियन सर्वे, अवसण 31ए छवण 11ए चच. 997-1019.

7.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) विद्रोह किसी राज्य एवं सत्ता के विरूद्ध किया जाने वाला कार्य है। इसके पीछे जनता का समर्थन होता है। जो इस प्रकार के कार्य में शामिल होते हैं उन्हें विद्रोही कहा जाता है। उनका लक्ष्य राजनीतिक स्वतंत्रता हासिल करना है। विद्रोह का आंतकवाद के साथ कुछ अंतर एवं समानता भी है। विद्रोह की ही भांति आतंकवाद भी हिंसा का सहारा लेना है तथा राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करना चाहता है एवं सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन स्वंतत्रता प्राप्त करना चाहता है एवं सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन भी करना इसका उद्देश्य है। लेकिन विद्रोह की तरह आतंकवाद को जनता का समर्थन हासिल नहीं होता है।

अभ्यास प्रश्न 2

1) जम्मू और कश्मीर में विद्रोह 1980 की दशक के अंत में एवं 1990 में शुरू हुआ था। उस समय कई विद्रोही संगठन राज्य में उभर कर सामने आये थे। इसका प्रमुख कारण था इन मुद्दों में वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था के खिलाफ गुस्सा एवं विश्वास की कमी, क्योंकि उनका मानना था कि यह प्रशासन उनके सम्मान एवं उनकी स्वायत्ता का सम्मान नहीं करती है।

2) उत्तर-पूर्व भारत के राज्यों में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् विद्रोह की समस्या उत्पन्न हुई थी। इसके वास्तविक एवं काल्पनिक दोनों ही कारण थे। ये कारण भौगोलिक, सामाजिक सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक भी थे। इनमें से कुछ विद्रोह जैसे नागा एवं मणिपुरी इसलिए उभरा क्योंकि उनकी समझ थी कि जिन क्षेत्रों में उनका प्रभाव है यह क्षेत्र पहले स्वतंत्र था, लेकिन बाद में यह भारत संघ में मिला लिया गया। उनका मानना है कि उन्हें अर्थात् मिजो समुदाय के साथ भारत सरकार एवं असम सरकार दोनों भेदभाव करते हैं। इन इलाकों में आये भयंकर अकाल (1959-1960) ने भी इनके अंदर इनके प्रति अनदेखी का आक्षेप लगा था क्योंकि इन अकाल ने उनकी वाँस की फसलों को काफी नुकसान पहुँचाया था। इसने ही 1960 में मिजो विद्रोह को बढ़ावा दिया था।

3) पंजाब में भी विद्रोह के राजनीतिक, सामाजिक-सांस्कृतिक एवं आर्थिक कारण थे। राजनीतिक कारणों में अकाली दल एवं काँग्रेस के बीच प्रतिस्पर्धा थी जो कि पंजाब में हावी थी। सामाजिक सांस्कृतिक कारणों में एक कारक हरित क्रांति का भी था जिनसे पूरे पंजाब में परिवर्तन किया एवं इससे सांस्कृतिक बदलाव भी आये। इससे यह भी आरोप लगा कि इसने सिख संस्कृति को ध्वस्त कर दिया था। उनका मानना था कि आर्थिक उन्नति एवं सांस्कृतिक उन्नति तभी जाकर बहाल की जा सकती है जब एक स्वतंत्र खालिस्तान राज्य का गठन हो।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 8 अलग राज्य की माँग के लिये आन्दोलन*

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 अलग राज्य के लिये आंदोलन : अर्थ एवं क्षेत्र

8.3 संवैधानिक प्रावधान

8.4 अलग राज्य के लिए आंदोलनों उठने के कारण

8.5 कुछ उदाहरण

8.5.1 1950-1960 में आंदोलन या भाषाई आधार पर राज्यों की माँग का आंदोलन

8.5.2 उत्तर-पूर्व भारत के राज्य

8.5.3 हिन्दी बेल्ट (क्षेत्र) में राज्य की माँग के आंदोलन

8.5.4 तेलंगाना राज्य की माँग के लिए आंदोलन

8.6 राजनीतिक दल एवं राज्य का जवाब

8.7 सारांश

8.8 संदर्भ सूची

8.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

यह इकाई भारत में नये राज्यों के गठन के लिए हो रहे आन्दोलनों की चर्चा से संबंधित है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह समझ सकेंगे :

- भारत में अलग राज्य के आंदोलन का अर्थ, लक्षण एवं कारणों को समझना;
- राज्य पुनर्गठन के संविधानिक प्रावधानों को समझना;
- अलग राज्य की राजनीति के संदर्भ को पहचानना, और
- अलग राज्य की माँग पर राज्य के जवाब या राज्य द्वारा की गयी पहल के बारे में विश्लेषण करना।

8.1 प्रस्तावना

भारतीय राज्यों विभिन्न भाषाओं, धर्मों एवं सांस्कृतिक गुटों समुदायों के लोग रहते हैं एवं राज्यों में क्षेत्रीय विकास का स्तर भी असमान है। इसी संदर्भ में क्षेत्रीय विविधताऐं ही राज्य में क्षेत्रीय जन चेतना को पैदा करने का आधार हैं। इस प्रकार की चेतना रखने वाले लोग यह मानते हैं कि राज्य में जो प्रशासनिक ढ़ाँचा है उसने उनके क्षेत्र के साथ सही व्यवहार नहीं किया गया है। और उनकी समस्या का एक मात्र समाधान है अलग राज्य का गठन करना। नया राज्य पूर्ण रूप से सभी प्रशासनिक निर्णय लेने के लिये एवं प्रशासन को सही तरह से चलाने के लिये स्वतंत्र होगा। प्रायः नये राज्यों की माँग करने वाले सामूहिक कार्यवाही एवं आन्दोलन का सहारा लेते हैं। भारत में नये राज्यों की माँग 1950 के दशक से ही शुरू हो गयी थी। नये राज्यों का निर्माण 1950, 1960, 1970, 1980 के दशकों तथा

*प्रो. जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली

2000 एवं 2014 में किया गया हैं। नये राज्यों के गठन के बाद भी और माँगें भी उठने लगी है। ए. के. सिंह (2009) के आकलन के अनुसार, भारत में 30 से अधिक राज्यों एवं स्वायत्ता के आंदोलन हो रहे हैं।

8.2 अलग राज्यों के गठन के लिए आन्दोलन : अर्थ एवं दायरा (क्षेत्र)

किसी क्षेत्र में सत्ता के संबंधों का पुनर्गठन करना एवं उसके लिये आंदोलन करना भी क्षेत्रीय आंदोलन हैं, क्योंकि यह भी क्षेत्रीय समस्याओं का समाधान करता है। ये आंदोलन सामान्य तौर पर तीन रूपों में उभरते हैं :- (1) अलग राज्य की माँग आंदोलन, (2) स्वायत्ता आंदोलन तथा (3) पृथकवादी आंदोलन। अलग राज्य के लिए आंदोलन की माँग है कि किसी राज्य से अलग होकर नया राज्य का गठन किया जाये। स्वायत्ता आंदोलन प्रशासनिक स्वायत्ता की माँग करते हैं ताकि उनके कामों में दखलदाजी न हो। जैसा आप ईकाई 6 में पढ़ा है, अलग राज्य के लिए आंदोलन से भिन्न ये आंदोलन अलग राज्य की मांग नहीं करते हैं। पृथकतावादी आंदोलन, पूर्ण रूप से राज्य से पृथक या अलग होने की बात करते हैं तथा स्वतंत्र एवं सार्वभौम राज्य की माँग करते हैं। यहाँ यह बात नोट करने की है कि हमारे संविधान अलग राज्य के गठन एवं स्वायत्ता के प्रावधान की बात तो करता है परंतु राज्य किसी क्षेत्र को पृथक (secession) होने की इजाजत नहीं देता है।

8.3 संवैधानिक प्रावधान

संविधान के अनु. 3 के अनुसार भारत में नये राज्यों के गठन का प्रावधान है। संविधान के मुताबिक, भारत के राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वे नये राज्यों के गठन की प्रक्रिया का प्रारंभ कर सकते हैं। राष्ट्रपति यह प्रक्रिया अपने स्वयं से या फिर जिस राज्य से अलग राज्य बनाया जाने वाला है उससे सलाह मशविरा करके शुरू कर सकते हैं। ऐसे राज्य, राष्ट्रपति से यह प्रार्थना कर सकते है कि वे अपने राज्य को बाँटकर नये राज्य के गठन की इच्छा रखते हैं। संबंधित राज्य अपनी विधान सभा में ऐसे प्रस्ताव के लिए राष्ट्रपति केन्द्र सरकार से यह कह सकते हैं कि वे संसद के दोनों सदनों में इससे संबंधित विधेयक प्रस्तुत करे तथा पारित भी करे। यदि संसद के दोनों सदनों में पारित होने के पश्चात् यह विधेयक वापस राष्ट्रपति को मंजूरी के लिये जाता है, राष्ट्रपति इस विधेयक पर अपनी मंजूरी देते हैं, तत्पश्चात् इस विधेयक की अधिसूचना जारी करके नये राज्य के गठन की प्रक्रिया शुरू होती है। यह प्रायः देखा गया है कि अनु. 3 की राजनीतिक व्याख्या की गयी है। यद्यपि, राष्ट्रपति के पास नये राज्यों के गठन की प्रक्रिया शुरू करने का अधिकार है, लेकिन वे राज्य सरकार के साथ सलाह मशविरा करने के बाद ही ऐसा करते है। प्रस्ताव पारित होने में राजनीतिक सौदेबाजी तथा राजनीतिक प्रभाव का अवसर होता है। राजनीतिक दल जो सत्ता में है एवं जो विपक्ष में है उनके बीच आपसी तालमेल एवं सहमति के बिना यह प्रस्ताव पारित नहीं हो सकता। प्राय यह देखा गया है कि राजनीतिक दल जब विपक्ष में होते हैं तो नये राज्यों के गठन की माँग करते हैं, लेकिन जब वे सत्ता में होते हैं, तब इसका विरोध करते हैं।

8.4 अलग राज्यों के गठन के आंदोलनों के प्रमुख कारण

नये राज्यों के गठन की माँग के पीछे कुछ विशेष कारण है। इन कारणों में कुछ विशेष लोगों की माँग एवं शिकायतें शामिल है। इन प्रमुख कारणों में, भाषा, संस्कृति, रीति-रिवाज, धर्म,

विकास का स्तर तथा कुछ ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य भी शामिल है। नये राज्यों की माँग करने वाले यह आरोप लगाते हैं कि उनके क्षेत्र को अनदेखा किया गया है, एवं इन कारणों के आधार पर उनके क्षेत्र के साथ भेदभाव किया गया है। इसलिए ये सभी कारण नये राज्यों की माँग का आधार बने हैं तथा इसके परिणामस्वरूप नये राज्यों के गठन के लिये आंदोलन में तेजी आई है। यहाँ यह बात नोट करने वाली है कि कुछ महत्वपूर्ण कारणों की वजह से ही राज्यों के गठन की माँग तेजी से बढ़ रही है। कुछ आन्दोलनों में, भाषा एक प्रमुख कारण बनकर उभरी है बजाय अन्य सभी कारणों के। कुछ आन्दोलनों में विकास, जाति एवं धर्म भी कुछ महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। ये सभी कारण भिन्न भिन्न क्षेत्रों में, भिन्न-भिन्न है, तथा इनका प्रभाव भी अलग अलग होता है।

अभ्यास प्रश्न1

नोटः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) अलग राज्य का दर्जा आंदोलन क्या है? स्वायत्ता से यह किस प्रकार भिन्न हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) संविधान के किस अनुच्छेद के द्वारा नये राज्यों का गठन किया जा सकता है? व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

8.5 कुछ उदाहरण

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, भारत में अलग राज्य के दर्जे के लिए आंदोलनों के अनेक उदाहरण है। उन्हें हमें चरणों में विभाजित कर सकते हैं :- प्रथम चरण 1950 के दशक से 1960 के दशक तक या भाषाई संगठन, दूसरा चरण - उत्तर-पूर्व भारत का पुनर्गठन 1963, 1971-72 एवं 1985 में, तीसरा चरण - हिन्दी पट्टी राज्यों में आन्दोलन, 1990 से 2000 तक, तथा चतुर्थ चरण - तेलंगाना आंदोलन।

8.5.1 1950-1960 दशकों केआंदोलन या भाषाई आधार पर राज्यों का पुनर्गठन

1950 के दशक में भाषा के आधार पर राज्यों की माँग उठने लगी। एक अक्टूबर 1953 को, देश का प्रथम भाषाई राज्य स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बनाया गया, वह था आन्ध्र राज्य। यह, एक अक्टूबर 1953 को पॉटी श्रीरामूलू की मौत के बाद बनाया गया, जिन्होंने अलग भाषाई राज्य की माँग करते हुए अनशन किया और उसके बाद उनकी मृत्यु हो गयी थी। यह राज्य मद्रास राज्य से अलग करके बनाया गया था जिसकी जनसंख्या तेलगू भाषा बोलने वालों की थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व भी 1937 में भाषा के आधार पर उड़ीसा एवं सिन्ध का गठन किया गया था। इन उदाहरणों में ब्रिटिश सरकार की नीति भाषा के आधार राज्यों के निर्माण के विपरीत थी। 1920 के दशक में काँग्रेस ने भी अपनी प्रांतीय समितियों का गठन भाषा के आधार पर की थी। परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति उपरांत, सरकार राज्यों को भाषा के आधार पर बनाने के समर्थन में नहीं थी। यह एक प्रकार से काँगेस पार्टी का अपनी नीतियों से अलग चलने का कदम था, जो उसकी प्रांतीय समितियों के गठन के भाषा के आधार बनाने के विपरीत था। सरकार को अपनी नीतियों में परिवर्तन करने का प्रमुख कारण था उस समय की परिस्थितियों में आये बदलाव। उस वक्त देश के सामने कई चुनौतियाँ थीः विभाजन के पश्चात् बड़े पैमाने पर सांप्रदायिक दंगे, शरणार्थियों की संख्या में बढ़ोतरी इत्यादि। इन सब परिस्थितियों के कारण केन्द्र ने यह महसूस किया कि भारत को एक मजबूत केन्द्र की आवश्यकता है। तथा भाषाई आधार पर विभाजन इसे कमजोर करेगा। इस परिवर्तन के बाद ही पॉटी श्रीरामूलू ने आंध्रप्रदेश राज्य के गठन के लिय अनशन करने का फैसला किया था।

1953 में आंध्रप्रदेश का गठन होने के पश्चात् भारत सरकार ने न्यायाधीश फजल अली की अध्यक्षता में राज्य पुनर्गठन आयोग (एस आर सी) का गठन किया था। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट 1955 में प्रस्तुत की। इस आयोग के पूर्व भी 1948 में धर आयोग का गठन किया था, जिसमें भाषा के आधार पर राज्यों के गठन की बात थी। धर आयोग ने भाषा के आधारपर राज्यों के गठन का पक्ष नहीं लिया था। फिर से, धर आयोग की सिफारिशों की समीक्षा करने के लिये एक समिति (जे वी पी समिति)का गठन किया गया, जिसके सदस्य जवाहर लाल नेहरू, वल्लभ भाई पटेल एवं पट्टा वी सीतारमैया थे। यह समिति धर आयोग की रिपोर्ट से सहमत थी एवं राज्यों के भाषा के आधार परपुनर्गठन के विरूद्ध थी। राज्य पुनर्गठन आयोग (एस आर सी)ने भाषा के अधार पर राज्य पुर्नगठन का सुझाव दिया था तथा उसकी सिफारिशों के अनुसार 1956-1960 में कई राज्यों का भाषा के आधार पर पुनर्गठन किया गया था।

1966 में पंजाब तथा उसके साथ हरियाणा एवं हिमाचल प्रदेश का गठन, पंजाबी सूबा आंदोलन का परिणाम था। पंजाबी सूबा आंदोलन अलग पंजाब राज्य पंजाबी भाषा के आधार बनाने की मॉग से शुरू हुआ था। यहाँ इस केस में धर्म भी शामिल हो गया क्योंकि ज्यादातर पंजाबी भाषा बोलने वाले सिख धर्म से ताल्लुक रखते थे। मास्टर तारा सिंह और संत फतेह सिंह ने पंजाबी सूबा आंदोलन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। पंजाब राज्य बनने के पश्चात पंजाबी भाषा से अलग पंजाब के क्षेत्रों को अलग करके हिमाचल प्रदेश एवं हरियाणा राज्य बनाए गए। जिस क्षेत्र को पंजाब से अलग करके हरियाणा और हिमाचल प्रदेशबनाये गए वहाँ की हिन्दी प्रमुख भाषा है।

8.5.2 उत्तर-पूर्व भारत के पुनर्गठन के लिये आन्दोलन

उत्तर-पूर्व भारत में, भारतीय संविधान की परिधि में सत्ता संबंधों के पुर्नगठन संबंधित दो प्रकार के आंदोलन होते है : एक स्वायत्ता आंदोलन तथा दूसरा, अलग राज्य के दर्जे के लिये आंदोलन। आपने इकाई संख्या 6 के अंदर स्वायत्ता आंदोलन के बारे में पढ़ा होगा। आप इस उप-इकाई में उत्तर-पूर्व मेंअलग राज्य के दर्जे के आंदोलनों के बारे में पढ़ेंगे। राज्य पुनर्गठन आयोग (एस आर सी) ने उत्तर-पूर्व राज्यों के पुनर्गठन का सुझाव नहीं दिया था। एस.आर.सी., असम में से अन्य किसी पहाड़ी राज्य के गठन के खिलाफ थी। इसका मानना था कि पुनर्गठन करने के बाद पहाड़ी क्षेत्र में अलगाववाद की प्रक्रिया उत्पन्न होगी, जो कि उपनिवेशवादी नीति के कारण शुरू हुई थी। इस नीति ने उत्तर-पूर्व के पहाड़ी क्षेत्रों को "बहिश्कृत एवं आंषिक बहिश्कृत" क्षेत्रों में बाँट दिया था। पहाड़ी क्षेत्रों में नये राज्यों के गठन के बजाय, वहाँ पर भाषाई एवं सांस्कृतिक स्वायत्ता का सुझाव दिया था। एस.आर. सी. ने यह भी दलील दी कि यदि असम से अलग पहाड़ी राज्यों का गठन किया गया तो वे आर्थिक रूप से मजबूत नहीं होगें। तथापि, कुछ समय पश्चात् अनेक राज्य जो नये बनाये गये वे असम का ही हिस्सा थे। उनमें नागालैण्ड 1963 में, मेघालय,मणिपुर एवं त्रिपुरा 1972 में, अरूणाचल प्रदेश एवं मिजोरम 1985 में शासित प्रदेशों से राज्य बनाये गये थे। सिक्किम का 1975 में भारत में विलय किया गया था।

पहाड़ी राज्य आन्दोलन

आदिवासी बहुल खासी, जैंतिया, गारो, लुसाई जैसे पहाड़ी क्षेत्रों, जो कि असम के भाग थे, के नेताओं ने पहाड़ी राज्य के गठन की इच्छा जताई थी। यद्यपि, पहाड़ी राज्य आंदोलन कोमुख्यतः उस समय के आसाम के अन्य पहाड़ी जिलों का समर्थन प्राप्त था पर इसे मुख्यतौर पर गारो, खासी, तथा जैंतिया पहाड़ी इलाकों से समर्थन मिला। यह माँग फिर से तूरा में ट्राइबल सम्मेलन में 1954 में दोहराई गयी थी। उन्होंने पहाड़ी आदिवासी संघ (Hill Tribal Union) का गठन किया जिसके अध्यक्ष डब्ल्यू. ए. संगमा थे तथा सचिव बी. बी. लिंदोह थे। 1955 में, सभी पहाड़ी नेता आईजोल में मिले एवं उन्होंने पूर्वी भारत आदिवासी संघ (EITU)का गठन किया। 1960 में, EITUके स्थान पर एक नया संघ बनाया गया जिसका नाम था सर्व दलीय पहाड़ी नेता सम्मेलन (All Party Hill Leaders Confrence) जिसका नेतृत्व विलियम संगमा ने किया। 1960 में असम में असमी भाषा विधेयक के असम विधान सभा में पारित होने के बाद ये लगा कि यह गैर-असमी भाषी समुदाय पर थोपी गयी भाषा थी, इसने भी अलग पहाड़ी राज्य की माँग को बढ़ावा दिया। ए.पी.एच.एल.सी. सभी जिलों का एकीकरण चाहती थी, नगा पहाड़ी जिले को छोड़कर, जो कि संविधान के भाग 'ए' की छठी अनुसूची में दिया गया है। नगा जिलों को इसलिए शामिल नहीं किया क्योंकि नगा हिल के नेतृत्व नेता एक संप्रभु राज्य चाहते थे, जबकि ए.पी.एच.एल.सी. का नेतृत्व भारतीय संघ के अंदर ही अलग राज्य बनाना चाहती थी। 1960 में, नेहरू ने स्कॉटलैण्ड के समान सभी पहाड़ी इलाकों को स्वायत्ता देने का प्रस्ताव दिया, जिसे पहाड़ी क्षेत्रों के नेताओं ने खारिज कर दिया। लेकिन इस प्रस्ताव को ए.पी.एच.एल.सी. के एक गुट ने स्वीकार कर लिया था वह गुट था आसाम हिल पिपुल्स काँफ्रेस (एच एस पी सी)। इसके परिणामस्वरूप, एक आयोग का गठन किया गया जिसका नाम था पटस्कर आयोग। इसका कार्य था स्वायत्ता के विषय को देखना। इस आयोग ने छठी अनुसूची में किसी भी प्रकार के परिवर्तन के विरूद्ध सिफारिश की। इससे ए.पी.एच.एल.सी. नाखुश दिखाई दी। इसके विरोध में, इसने 1967 के आम चुनावों का भी बहिश्कार किया। ऐसी स्थिति में जब इंदिरा गाँधी ने 1967 में शिलांग का दौरा किया तब उन्होंने असम का पुनर्गठन करने का वादा किया था। इसके परिणामस्वरूप, 1969 में संसद ने संविधान का 22वाँ संशोधन विधेयक पारित किया,

जिसे असम पुनर्गठन विधेयक कहा जाता है। जिसके अनुसार असम के अंदर ही (ऑटोनोमस स्टेट) मेघालय का गठन किया गया। 1971 में, राष्ट्रपति ने नये राज्यों के गठन के लिए कानून पास किया, जिसके अनुसार मणिपुर, त्रिपुरा, मेघालय जैसे नये राज्य एवं मिजोरम तथा अरूणाचल प्रदेश जैसे केन्द्र शासित प्रदेशों के गठन हुए थे।

नागालैण्ड के लिये आंदोलन

आपने इकाई संख्या 6 में स्वायत्ता के बारे में तथा इकाई संख्या 7 में विद्रोह के बारे में पढ़ा होगा। इस इकाई में आप नागालैण्ड के गठन के बारे में पढ़ेंगे। नागालैण्ड राज्य का गठन 1963 में हुआ था। जैसा कि आपने इकाई संख्या 7 में पढ़ा है,1960 में नागालैण्ड राज्य का गठन असमी भाषा के थोपने के कारण नहीं हुआ था बल्कि, यह उससे पहले ही शुरू हो चुका था। फिर भी केन्द्र ने 1963 में अलग नागालैण्ड राज्य बनाने का निर्णय लिया था। मिजोरम के साथ भी ऐसा ही हुआ था, मिजोरम के लिये भी कोई आंदोलन नहीं था बल्कि उससे पूर्व विद्रोह था।

असम समझौता तथा राज्य के दर्जे के लिये आंदोलन

1985 में असम समझौता हुआ था जिसने 6 साल तक विदेशी विरोधी आंदोलन को असम में समाप्त किया था, इसके बाद अरूणाचल प्रदेश और मिजोरम जो केन्द्र शासित प्रदेश थे उनको राज्य का दर्जा दे दिया गया था। इससे यह पता चलता है कि उत्तर-पूर्व भारत में, अलग-अलग समय में अलग-अलग राज्य बनाये गये थे तथापि इन राज्यों के गठन के बाद भी अलग राज्य की माँग समाप्त नहीं हुई थी। असम समझौते के बाद बोडोलैण्ड के गठन की माँग तेजी से उठने लगी तथा करबी एंगलौंग जिले की स्वायत्ता की माँग भी उठने लगी।

उत्तर-पूर्व में अन्य आन्दोलन

उपर्युक्त आंदोलनों के अलावा भी उत्तर-पूर्व भारत में अलग राज्यके लिए और भी आंदोलन हुए थे। बंगाली भाषा बोलने वाले बहुसंख्यक लोगों ने भी अलग राज्य की माँग की। 1960 के असम भाषा विधेयक ने इस आंदोलन को और बढ़ाया था। कचर राज्य पुनर्गठन समिति, जिसका निर्माण एस.आर.सी. रिपोर्ट जमा करने के बाद हुआ था, ने इस माँग को उठाया तथा बंगाली बहुल इलाकों में पूर्वाचंल प्रदेश बनाने की माँग उठाई।

8.5.3 हिन्दी पट्टी राज्यों में अलग राज्य के लिए आंदोलन

चार नये राज्यों के गठन, जिसमें सन् 2000 में उत्तराखंड, छत्तीसगढ़ तथा झारखंड एवं 2014 में तेलंगाना के गठन करने बाद भी हिन्दी पट्टी राज्यों में अलग राज्य की माँग बंद नहीं हुई हैं। 1950 एवं 1970 के दशकों के विपरीत, जिसमें भाषा एवं संस्कृति मुख्य आधार था, 1990 के दशक से नये राज्यों के गठन के लिए विकास सबसे प्रमुख आधार था।

उत्तराखण्ड / उत्तरांचल

उत्तराखण्ड की उत्तर प्रदेश में से एक राज्य बनने की माँगएक प्रमुख माँगों में से थी। उत्तर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों में अलग राज्य की माँग 1938 के काँग्रेस के श्रीनगर सम्मेलन से ही उठने लगी थी। स्वतंत्रता प्राप्ति तक यह माँग लगातार जारी रही तथा टिहरी गढ़वाल के राजनीतिक नेतृत्व ने उत्तर प्रदेश को पहाड़ी इलाकों के समतल इलाकों से अलग करने की जरूरत, को महसूस किया था। 1946 में, बदरीदत्त पांडे जो कि जाने माने वकील एवं राजनीतिक कार्यकर्त्ता थे, ने हल्दवानी रैली में वनवासियों के अधिकारों की रक्षा एवं बेगार विरोध जैसे मुद्दों का उठाया था। उनकी माँगों को उत्तर प्रदेश में कुमाऊँ, टिहरी गढ़वाल

एवं ब्रिटिश गढ़वाल को मिलाने के बाद अनदेखा कर दिया गया। 1952 में कम्यूनिस्ट नेता पी. सी. जोशी ने नेहरू को एक ज्ञापन दिया जिसमें उत्तर प्रदेश के पहाड़ी इलाकों का एक राज्य बनाये जाने पर जोर दिया क्योंकि ये इलाके सदियों से पिछड़े थे। नेहरू ने इस माँग को खारिज कर दिया। के. एम. पर्णिकर ने उत्तर प्रदेश को बड़ा बनाने के खिलाफ अपना विरोध दर्ज करवाया, क्योंकि इससे प्रशासन चलाने में दिक्कत आयेगी। उत्तर-प्रदेश के तीन मुख्यमंत्रियों एच.एन. बहुगुणा, एन.डी. तिवारी एवं जी.बी. पंत ने इस आधार पर अलग राज्य बनाने का विरोध किया कि इस क्षेत्र में कोई रोजगार नहीं है, उद्योग नहीं है। उन्होंने कहा कि इससे अच्छा है कि इस क्षेत्र को उत्तर प्रदेश में रहने दिया जाये। लेकिन 1960-1970 के दशकों के दौरानअलग राज्य की माँग लगातार बढ़ती गयी। 25 जुलाई 1979 को उत्तराखण्ड क्रांति दल (यू. के. डी.) नामक राजनीतिक दल का गठन किया गया जिसके अध्यक्ष डी.डी. पंत थे, जो कि कुमाऊँ विश्वविद्यालय के पूर्व उपकुलपति भी थे। यू. के. डी. का मुख्य उद्देश्य था उत्तर-प्रदेश के पहाड़ी के इलाकों को मिलाकर अलग राज्य का गठन करना। इस दल ने 1980 एवं 1986 के चुनावों में भाग लिया। इसके बाद 1980 के दशक के अंत में इस मुद्दे को भारतीय जनता पार्टी ने उठाया। कल्याण सिंह सरकार ने 1991 में, एस.पी.-बी.एस.पी. सरकार ने 1994 में तथा बी.एस.पी.-बी.जे.पी. सरकार ने 1997 में विधान सभा में उत्तराखंड के गठन का प्रस्ताव पारित करवाया था। इसके बाद 2000 में उत्तराखंड राज्य का गठन किया गया।

इसके अलावा उत्तर प्रदेश के अन्य क्षेत्रों से भी अलग राज्य बनाने की माँग उठने लगी, जैसे कि हरित प्रदेश, बुंदेलखंड एवं पूर्वाचल तथा अवध प्रदेश। 1990 दशक के शुरूआत में अलग उत्तराखण्ड की माँग काफी लोकाप्रिय हुई थी क्योंकि इसमें सभी वर्गों के लोगों ने हिस्सा लिया था। प्रारंभ में, उत्तराखंड का आंदोलन अलग राज्य के लिए नहीं था, यह तब सामने आया जब 1994 में उत्तर के पहाड़ी क्षेत्रों में भी अन्य पिछड़ा वर्ग को आरक्षण दिया गया था। क्योंकि उस समय पहाड़ी इलाकों की आबादीओ. बी. सी. की तुलना में उच्च जाति के वर्गों की अधिक थी। इससे यह अंदेशा हुआ कि आरक्षण उनके हितों को बुरी तरह से प्रभावित करेगा। उत्तर-प्रदेश के पहाड़ी लोगों ने सरकार के इस निर्णय का विरोध किया। इसका नतीजा यह हुआ कि पुलिस एवं आंदोलनकारियों के बीच झड़प हुई। पुलिस ने जवाब में गोली चलाई जिसमें कई लोग मारे गये। इस घटना को हम खटीमा कांड के रूप में जानते हैं। इस खटीमा कांड के बाद उत्तर प्रदेश में तनाव और बढ़ गया, तथा लोगों ने इस घटना के विरोध में अलग राज्य की माँग की और गति प्रदान की। उनका मानना था कि उन्हें शासन करने के लिए अपना राज्य चाहिये। इसलिए उत्तराखण्ड की माँग करने लगे। खटीमा कांड के बाद 1996, 1998 एवं 1999 के लोक सभा चुनाव एवं 1998 के विधान सभा चुनावों में इसका प्रभाव दिखाई दिया। इन चुनावों में भी उत्तराखण्ड की माँग सुनाई देने लगी। केन्द्र एवं राज्य दोनों जगह पर एन.डी.ए. की सरकार थी जिसने इस माँग को स्वीकार कर लिया, इसके बाद अलग उत्तराखण्ड राज्य के गठन की प्रक्रिया शुरू हो गयी।

8.5.4 तेलंगाना राज्य की माँग के लिए आंदोलन

सन् 2014 में आंध्र प्रदेश राज्य के कुछ जिलों को मिलाकर तेलंगाना राज्य का निर्माण हुआ था। एक राज्य बनने से पहले तेलंगाना आंध्र प्रदेश राज्य का विशेष पहचान वाला राज्य था। यह आंध्र प्रदेश के दो अन्य क्षेत्रों - रायलसीमा और तटीय आंध्र से भिन्न था। हैदराबाद निजाम के शासन में तेंलगाना हैदराबाद राज्य तथा तेलंगाना और आंध्र मद्रास प्रेजिडेंसी के हिस्से थे। कांग्रेस तथा भारतीय कम्युनिस्ट दल ने तेलंगाना, आंध्र तथा रायलसीमा क्षेत्रों को भाषा के आधार मिलाकर एक आंध्र राज्य बनाने की माँग की थी। 1953 आंध्र तेलुगु भाषा

के आधार पर एक राज्य निर्माण की मांग गांधीवादी पाँटी श्रीरामलू के लिए भूख हड़ताल की थी जिससे उनकी मृत्यु हो गई थी। उन्होंने मांग की थी आंध्र प्रदेश को भूतपूर्व मद्रास प्रेंजीडेस तथा हैदराबाद राज्य के तेलंगाना क्षेत्रों को मिलाकर बनाया जाए। पाँटी श्रीरामलू की मृत्यु के बाद केंद्रीय सरकार राज्य पुर्नगठन आयोग (एस. आर. सी.) की स्थापना की जिसका उद्देश्य नये राज्यों के निर्माण की आवश्यकताओं तथा उनके आधारों की जाँच करना था। एस. आर. सी. ने 1955 में रिपॉर्ट जमा की तथा पाया की तेलंगाना , रायलसीमा तथा तटीय आंध्र क्षेत्रों में एकरूपता का अभाव था। आयोग ने एक पाँच साल के लिए तेलंगाना राज्य बनाने का सुझाव कुछ शर्तों के आधार पर किया। यह शर्त थी कि तेलंगाना राज्य के अस्तित्व में आने के पाँच साल बाद तेलुगु भाषा के आधार पर तेलंगाना के साथ-साथ तटीय आंध्र और रायलसीमा को मिलाकर एक राज्य का निर्माण किया जाए। परन्तु पाँच साल की समाप्ति से पहले तेलुगु भाषा के आधार पर 1956 में रायलसीमा, तटीय आंध्र और तेलंगाना को मिलाकर आंध्र प्रदेश राज्य का निर्माण किया गया। आंध्र प्रदेश के निर्माण को तेलंगाना क्षेत्र में इस संदेह के साथ देखा गया कि यह उनके ऊपर आंध्र क्षेत्र के लोगों कावर्चस्व स्थापित कर देगा क्योंकि तेलंगाना क्षेत्र के लोग आंध्र क्षेत्र के लोगों से आर्थिक और शैक्षिक आधार से पिछड़े थे। यह आशंका इसके बावजूद हुई कि आन्ध्र प्रदेश के विभिन्न क्षेत्र एक समान तेलुगु भाषा बोलते थे। आंध्र राज्य बनने के विरोध में एक आंदोलन हुआ। जिसके परिणामस्वरूप तेलंगाना और आंध्र क्षेत्रों के कांग्रेसी नेताओं के मध्य 1956 में एक समझौता हुआ। इस समझौते के जेटिलमेन एग्रीमेंट (Gentleman Agreement) के नाम से जाना गया था तथा इसका उद्देश्य तेलंगाना क्षेत्र के हितों की रक्षा करना था। अन्य आश्वासनों के साथ, जेंटिलमेन एग्रीमेंट के दो मुख्य आश्वासन थे। प्रथम, एक क्षेत्रीय समिति का निर्माण किया जाएगा जो क्षेत्रीय समस्याओं का निरीक्षण कर उनके समाधान का सुझाव देगी। द्वितीय, यदि मुख्यमंत्री एक क्षेत्र से होगा तो उपमुख्यमंत्री दूसरे क्षेत्र से होगा। जेंटिलमेन एग्रीमेंट के हस्तातरित होने के कुछ समय पश्चात तेलंगाना क्षेत्र के लोग में रोश पैदा हो गया कि समझौते का पालन नहीं किया गया। तेलंगाना क्षेत्र के लोगों ने शिकायत की कि उनका क्षेत्र आतंरिक उपनिवेश बन गया; विद्यार्थी, नौकरशाह, अध्यापक, वकील तथा व्यापारी आंध्र क्षेत्र से थे; उनका मानना था कि तेलंगाना आंध्र प्रदेश में एक पिछड़ा क्षेत्र बना रहा। नवयुवकों के एक बुद्धिजीवी समूह ने तेलंगाना प्रजा समिति (टीपीएस) का निर्माण किया जो एक गैर राजनीतिक संगठन था तथा जिसका उद्देश्य तेलंगाना राज्य के लिए लामबंदी करना था। टी पी एस के निर्माण के कुछ समय पश्चात् इसमें चेन्ना रेडडी तथा काँडा लक्ष्मण जैसे राजनीतिज्ञ शामिल हो गए। टीपीएस ने 1971 को लोक सभा चुनाव तेलंगाना राज्य बनाने के मुद्दे पर लड़ा। इसने तेलंगाना क्षेत्र की 14 में 10 सीटों पर विजय प्राप्त की। चुनाव के बाद टीपीएस का कांग्रेस में विलय हो गया तथा तेलंगाना का मुद्दा पीछे रह गया, यद्यपि, एक केन्द्रीय विश्वविद्यालय की हैदराबाद में स्थापना हो गई थी। 1985 में जी. ओ. 610 द्वारा एन टी रामाराव के नेतृत्व वाली टी.डी. पी. सरकार ने तेलंगाना क्षेत्र की समस्याओं को सम्बन्धित किया। इस जी. ओ. में नौकरियों में कुछ चयनों पर तेलंगाना में वहाँ के लोगो को रखने का आश्वासन दिया गया। यद्यपि चद्रबाबू नायडू की सरकार तेलंगाना राज्य निर्माण की विरोधी थी, इसने जी. ओ. 610 को लागू करने के उद्देश्य से एक व्यक्ति की सदस्यता वाले आयोग - जे. एस. गर्गलानी आयोग की नियुक्ति की। गर्गलानी आयोग के अनुसार जी. ओ. 610 का उलंघन किया गया तथा तेलंगाना क्षेत्र के व्यक्तियों के स्थान पर आंध्र क्षेत्र के व्यक्तियों की नियुक्ति की गई। तेलंगाना राज्य की मांग को 2001 में के. चंद्रषेखर (के सी आर) द्वारा स्थापित तेलंगाना राष्ट्रीय समिति (टीआरएस) ने फिर से उठाया। इसने 2004 के लोकसभा तथा विधानसभा चुनाव कांग्रेस के साथ मिलकर लड़ा। टी आर एस - कांग्रेस गठबंधन ने 2004 में सरकार बनाई, जिसमें कांग्रेस का मुख्यमंत्री बना। केंद्र में भी टीआरएस कांग्रेस के साथ यूपीए का

सदस्य थी। यूपीए सरकार ने एक उप-समिति का गठन किया जिसके प्रणव मुखर्जी तथा शरद पवार सदस्य थे। इस समिति का उद्देश्य तेलंगाना राज्य निर्माण के मुद्दे की समीक्षा करना था। इस समय, कांग्रेस तथा टीआरएस में मतभेद हो गए। परिणामस्वरूप 2006 में टीआरएस यूपीए से बाहर निकल गया।

टीआरएस के यूपीए गठबंधन से बाहर होने के पश्चात 2007 में आंदोलन ने फिर से जोर पकड़ा। ओस्मानिया विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों, अध्यापकों तथा कर्मचारियों ने आंदोलन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। 2009 के लोकसभा चुनाव में तेलंगाना का मुद्दा हावी रहा, जिसका टीआरएस ने समर्थन तथा कांग्रेस ने विरोध किया। फिर भी, यूपीए सरकार ने जस्टिस श्रीकृष्णा के नेतृत्व में एक समिति का गठन था जिसका उद्देश्य तेलंगाना मुद्दे का निरीक्षण कर 31 दिसंबर 2010 रिपोर्ट जमा करना था। कई वर्षों की तेलंगाना राज्य की माँग की पृष्ठभूमि में यूपीए मंत्रीमण्डल ने 7 फरवरी, 2014 को एक बिल पास किया जिसमें आंध्र प्रदेश को दो राज्यों में विभाजित करने का प्रस्ताव था - तेलंगाना और आंध्र प्रदेश। इसके ससंद के दोनों सदनों की स्वीकृति के पश्चात 2 जून, 2014 को तेलंगाना राज्य की स्थापना हो गई।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन पर केन्द्र सरकार का रूख क्या था?

.....

.....

.....

.....

.....

2) उत्तर-पूर्व भारत में राज्यों के पुनर्गठन की प्रक्रिया का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) हिन्दी पट्टी इलाकों में अलग-राज्य के आंदोलन की प्रमुख विशेषताओं की पहचान कीजिए।

.....

.....

.....

.....

8.6 राज्य एवं राजनीतिक दलों की प्रतिक्रिया

राजनीतिक दलों की प्रतिक्रिया राजनीतिक मुनाफे के लिए की जाती है। तथा उनको राजनीतिक परिप्रेक्ष्य भी तय करता है। सामान्यतया अलग राज्य के आंदोलन राजनीतिक दलों के भीतर से ही पनपने लगती है। ये चुनावों के दौरान, राजनीतिक प्रतिस्पर्धा एवं गुटबाजी के फलस्वरूप भी सामने आती हैं। राजनीतिक दल जब विपक्ष में होते हैं तब इस माँग का समर्थन करते हैं लेकिन जब सत्ता में होते है तो इसका विरोध करते हैं। यहाँ तक राजनीतिक दलों के राष्ट्रीय नेतृत्व एवं स्थानीय नेतृत्व में अंतर होता है। क्योंकि दोनों स्तर पर जाति समूहों का समर्थन अलग-अलग होता है।

तेलंगाना एवं झारखंड के गठन के आंदोलनों को छोड़कर अन्य राज्यों जैसे छत्तीसगढ़, उत्तराखंड या हरित प्रदेश के आंदोलन में जनता की भागीदारी की कमी थी। इनकी माँग केवल राजनीतिज्ञों, ने सेमिनार, सम्मेलनों, या प्रस्तावों के माध्यम से ही उठायी थी। पॉल आर. ब्रास के अनुसार, सरकार ने कुछ शर्तों के साथ इनकी माँग को मान लिया था। इन शर्तों में यह कहा गया था कि उन्हीं क्षेत्रों में अलग राज्यों की माँगों को माना जायेगा जहाँ पर इस प्रकार की माँगों का समर्थन दोनों ओर से हो - वे क्षेत्र जो नए राज्य की माँग करते हैं तथा वे राज्य जिनमें से नए राज्य बनाएं जाएं।

8.7 सारांश

अलग राज्य की माँग किसी एक राज्य या एक से अधिक राज्य के क्षेत्रों को मिलाकर नये राज्य बनाने के उद्देश्य से होती है। नये राज्यों की अपनी अलग विधायिका एवं कार्यपालिका होनी चाहिए ताकि ये राज्य अपने अधीन आने वाले क्षेत्रों का प्रशासनिक कार्य कर सके। नये राज्यों को संविधान के अनुच्छेद 3 के अनुसार गठित किया जा सकता है। इस अनु. के मुताबिक केवल केन्द्र सरकार को यह अधिकार दिया गया है कि वह नये राज्यों का गठन करे, हालांकि केन्द्र सरकार यह कार्य राज्य विधान सभा की सलाह मशविरा के साथ करती है। नये राज्यों के गठन की माँगके आर्थिक, राजनीतिक, प्रशासनिक कारण होते है। ये कारण वास्तविक भी हो सकते है तथा काल्पनिक भी। भारत में अलग राज्य के लिये स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही आंदोलन हो रहे हैं। आंध्र राज्य सबसे पहला राज्य था जो कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1953 में बना, यह प्रदेश पॉटी श्रीरामूलू के निधन के बाद बना। यह भाषा के आधार पर बनाया गया राज्य था। वास्तव में कई क्षेत्रों से भाषा के आधार पर राज्य के पुनर्गठन करने की माँग उठी थी। लेकिन केन्द्र सरकार भाषा के आधार पर राज्य को पुनर्गठन के पक्ष में नहीं थी। फिर भी केन्द्र सरकार ने न्यायाधीश फजल अली की अध्यक्षता में 1953 में राज्य पुनर्गठन आयोग (एस आर सी) का गठन किया था। एस. आर. सी. ने भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की सिफारिश की, लेकिन इसमें यह भी कहा गया कि एक प्रमुख भाषा के अलावा अन्य भाषाओं की भी पहचान की जायेगी। एस. आर. सी. की सिफारिशों के आधार पर ही भाषायी राज्यों का गठन किया गया था। इसके बाद अनेक अन्य माँग भी बढ़ने लगी। 1960 में महाराष्ट्र का गठन हुआ, 1966 में हरियाणा एवं हिमाचल प्रदेश का भाषा के आधार पर तथा पंजाब धर्म एवं भाषा के आधार पर गठन हुआ। उत्तर-पूर्व भारत के राज्य एस. आर. सी. की सिफारिशों का हिस्सा नहीं थे। इस क्षेत्र का पुर्नगठन बाद में किया गया था। उत्तर-पूर्व का पुर्नगठन आधार भाषा न होकर जाति, नस्ल, एवं रीतिरिवाज थे। इस प्रकार 1963 में नागालैण्ड का गठन हुआ, 1972 में मेघालय का। छत्तीसगढ़, झारखंड, एवं उत्तराखंड का गठन 2000 में हुआ था जो कि हिन्दी पट्टी क्षेत्र के राज्य हैं तथा 2014 में तेलंगाना राज्य बनाया गया जो कि दक्षिण भारत में है। ये नये राज्य भाषा के आधार पर नहीं बनाये गये बल्कि विकास के स्तर पर बनाये गये हैं।

8.8 संदर्भ सूची

मुखर्जी, पम्पा (2011), ''द क्रीएशन ऑफ ए रीजनः पोलिटिक्स ऑफ आइडेंटिटि एंड डेवेलोपमेंट इन उतराखंड'', आशुतोष कुमार (संकलित) ''रीजनस वीदिन रीजनसः रिथिंकिंग स्टेट पोलिटिक्स इन इंडिया'', नई-दिल्ली, राउटलेज।

नाग, सजल (2011), '' *'लिंगविस्टिक प्रॉविंसिस' टू 'होम लेंडसः सिफ्टिंग पैराडेमस ऑफ स्टेट मेकिंग' इन पॉस्ट-कॉलोनियल इंडिया*', आशा सांरगी एवं सुधार पाई (एड.)*इंटरोगेटिंग रिआर्गेनाइजेशन ऑफ स्टेट्सः कल्चर, आईडेंटिटी एण्ड पॉलिटिक्स इन इंडिया,* राउटलेज, नई-दिल्ली.

सिंह, ए. के. (2009), *फेडरल परस्पेक्टिव, कॉंस्टिटयूशनल लॉजिक एण्ड रिआर्गेनाइजेशन ऑफ स्टेट्स, सेंटर फॉर फेडरल स्टडीज विद मयँक* पब्लिकेषन, न्यू डेलही.

सिंह, जगपाल (2011),''पॉल्टिक्स ऑफ हरित प्रदेशः द केस आफ वेस्ट्रन यू पी एज ऐ सेपरेट स्टेट'', इकॉनामिक एण्ड वीकली, वो. 36, न. 31, अगस्त 4-10, पे. 2961-2967.

टिलिन, लूइस (2011), ''रिओगनाइजिंग दि हिंन्दी हार्टलैण्ड इन 2000ः द रीजनल पोलिटिक्स ऑफ स्टेट फॉरमेषन इन आशा सारंगी एण्ड सुधा पई (एड.) इंटरोगेटिंग रिआर्गेनाइजेशन ऑफ स्टेट्स, पे. 107-126.

टिलिन, लूइस (2013), रिमैपिंग इंडियाः द पोलिटिक्स ऑफ बॉर्डरस इन इंडिया, हस्ट एंड कंपनी, लंदन।

8.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) एक या एक से अधिक राज्यों से अलग करके बनाये जाने वाले राज्य के लिए आंदोलन ही 'राज्य का दर्जा' वाला आंदोलन कहलाता है। स्वायत्ता आंदोलन 'राज्य दर्जे के आंदोलन से भिन्न है, क्योंकि यह अलग राज्य की माँग नहीं करता बल्कि राज्य के अंतर्गत ही स्वायत्ता की बात करता है।

2) अलग राज्य का गठन संविधान के अनुच्छेद 3 के अनुसार गठित किया जा सकता है। संविधान के अनुसार भारत के राष्ट्रपति को पहल करने का अधिकार दिया गया है। वे संबंधित राज्य से इस सिलसिलें में विचार विमर्श कर सकते हैं। संबंधित राज्य अपनी विधान सभा में प्रस्ताव पारित करके अपनी सहमति राष्ट्रपति को देता है। इसके बाद यदि संसद के दोनों सदन इस प्रस्ताव को पारित कर देते हैं, इसके बाद राष्ट्रपति अपनी मंजूरी देते हैं। इस प्रकार नये राज्य के गठन की प्रक्रिया पूर्ण होती है।

अभ्यास प्रश्न 2

1) स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् केन्द्र सरकार भाषा के आधार पर राज्यों के गठन के पक्ष में नहीं थी। क्योंकि उस वक्त देश के सामने, विभाजन के बाद कई गंभीर चुनौतियों सामने थी। नेतृत्व को लगा कि इससे देश कमजोर होगा। हालांकि बाद में आंध्र राज्य का गठन भाषा के आधार पर किया गया था, क्योंकि पॉटी श्रीरामूलू ने इसके लिए अपनी जान दे दी थी। भाषा के आधार पर राज्य के गठन की माँग को देखते हुए

सरकार ने राज्य पुनर्गठन आयोग (एस.आर.सी.) का गठन किया। एस. आर. सी. ने भाषा के आधार पर राज्य बनाने का सुझाव दिया था। उसके बाद 1950 के दशक में, भाषाई आधार राज्यों का संगठन भी किया गया।

2) उत्तर-पूर्व राज्यों का पुनर्गठन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद किया गया। नागालैण्ड प्रथम राज्य था जिसका गठन 1963 में किया गया था। उसके बाद 1972 में मेघालय का गठन किया गया तथा 1985 में असम-समझौते के बाद अरूणाचल प्रदेश एवं मिजोरम को राज्यों का दर्जा दिया गया। उसके बाद बोडोलैण्ड की माँग भी उठने लगी। उत्तर-पूर्व का पुर्नगठन एस. आर. सी. के सुझावों के आधार पर नहीं किया गया। उत्तर-पूर्व का पुनर्गठन विकास एवं सांस्कृतिक, जातीय कारकों को ध्यान में रखकर किया गया था।

3) हिन्दी पट्टी क्षेत्रों में अलग राज्य की माँग भी काफी लंबे समय से उठ रही थी। इनमें सबसे प्रमुख माँग थी उत्तर-प्रदेश को चार हिस्से में बाँटा जाये जिसमें उतराखंड भी शामिल था। मध्यप्रदेश से छत्तीसगढ़, तथा बिहार से झारखंड बनाने की माँग। इसका मुख्य कारण था इन क्षेत्रों में निम्न विकास का स्तर। हरित प्रदेश को छोड़कर बाकी अन्य क्षेत्रों को यह मान लिया गया कि वहाँ पर काफी पिछड़ापन है। अलग राज्य बनने के बाद इन इलाकों का विकास करना आसान हो जायेगा। हरित प्रदेश के मामले में यह बात सामने आयी कि यह क्षेत्र उतना पिछड़ा नहीं है। हिन्दी भाषी क्षेत्रों में सिवाय कुछ आंदोलनों के बाकी आंदोलनों में जनता का समर्थन ज्यादा नहीं था। उन्हें राजनीतिक विशिष्ट वर्ग के लोगों ने उठाया था जिनका मकसद राजनीतिक था।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY